चन्दामामा
मार्च १९९५
Rs 5

चन्दामामा
चांदोबा
CHANDAMAMA
చందమామ

Say "Hello" to text books and friends
'Cause School days are here again
Have a great year and all the best
From Wobbit, Coon and the rest!

चन्दामामा

मार्च १९९५

एक प्रति : ५.००

वार्षिक चन्दा : ६०.००

चन्दामामा

संपादक : 'चक्रपाणी'
संचालक : नागिरेड्डी

बच्चों का मनोरंजन

पिछली बार हमने बच्चों के मनोरंजन तथा शिक्षा के लिए दूरदर्शन पर एक अलग चालन खोलने की बात की थी। दूरदर्शन को देखते रहने में अगर वे दो घंटों का अपना मूल्यवान समय निकालें भी तो प्रश्न उठता है कि क्या हमारे पास उनको दिखाने योग्य मनोरंजन के कार्यक्रम हैं? क्या हम ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन कर पायेंगे और उन्हें दूरदर्शन पर नियमित तथा सुव्यवस्थित रूप मे दिखा पायेंगे?

उदाहरण के लिए बच्चों के चित्रपटों की बात ही लीजिये। भारत में हर वर्ष लगभग सात सौ से लेकर आठ सौ चित्रपटों का निर्माण होता है। इनके अंतर्गत कुछ बच्चों के चित्रपट भी हैं। ऐसे चित्रपट उँगलियों पर गिने जा सकते हैं, अर्थात बहुत ही कम हैं। बलगेरिया जैसा छोटा देश हर वर्ष सत्तर से अस्सी तक चित्रपट बनाता है, जिनमें आधे चित्र बच्चों के लिए ही बनते हैं।

भारत में बच्चों के लिए बनाये जानेवाले चित्रपटों के लिए निर्माता कहानियों की कमी महसूस करते हैं। वे यह भूल जाते हैं कि इस देस का इतिहास समृद्धिशाली है; इसके पास पाँच हजार सालों का इतिहास भरा पड़ा है। इसके पुराण, इसकी दंतकथाएँ, लोककथाएँ तथा विशिष्ट घटनाओं से भरा इसका इतिहास महत्वपूर्ण है। अधिकाधिक बिकनेवाले साहित्य-ग्रंथों के विषयों को अपना माध्यम चुनकर अमेरीका, ब्रिटेन आदि देशों में सफल व सुंदर फिल्मों का निर्माण होता है। भारत की पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित बहुत-सी ऐसी कथा-वस्तुएँ भी हैं, जो मनोरंजन-पूर्ण चित्रपट बनाने की सामग्री सिद्ध हो सकती हैं। सच कहा जाए तो यह कोई आवश्यक नहीं कि दूरदर्शन पर चित्रपट ही चित्रपट दिखाये जाएँ। आजकल बच्चों को क्रीडा-रंग में पर्याप्त दिलचस्पी है। वे विज्ञान की प्रगति भी जानने के लिए उत्सुक हैं, नये-नये आविष्कारों को आँखों देखने और उनके बारे में जानने को तत्पर हैं। वे बाहर जाकर प्रकृति के सुंदर दृश्य भी देखने की इच्छा रखते हैं। जगह-जगह जाकर वहाँ की विचित्रताओं व विशिष्टताओं का अवलोकन भी करना चाहते हैं। उनके मनोरंजन की सामग्री की कोई कमी ही नहीं है। कोई भी शिक्षाप्रद तथा स्वस्थ मनोरंजन बच्चों को अवश्य ही भायेगा, जो लाभदायक भी सिद्ध होगा।

वर्ष : ४८ मार्च १९९५ अंक : ७

एक प्रति : रु. ५/- वार्षिक चन्दा : रु ६०/-

Now
Writing is a pleasure
with LION Novelty
Introducing the winning edge
NEW RANGE OF FANCY PENCILS.
Lion's Novelty Pencils have Mythologies from the Ramayan, Mahabharat and Shri Krishna Leela in colourful pictures. Making it interesting and easier for children to understand ethics.
Decorative pencils with Birthday Greeting messages, Rainbow colours and Alphabets are a silent language of love.
RAINBOW
Pencils with action-packed pictures of the Turtles, Hi.... Cat and Ping Pong brim 'YOUNG SMARTIES' with overpowering confidence.
TURTLES
LION PINKY PENCILS
Pinky, the charming beauty garbed in floral attire is all ready to allure every young boy and girl in town. She has claimed 'The Beauty And The Brain Pencil' title already.
PINKY
Manufactured by
LION PENCILS LTD.,
MARKETING DIVISION
95, PARIJAT, MARINE DRIVE, BOMBAY-400 002. TEL: 296856, 2089926
National-960

समाप्त हज़ार दिनों का युद्ध

जहाँ नववर्षारंभ पर गिरजाघरों के घंटों की ध्वनियाँ सुनायी पड़नी चाहिये थीं, वहाँ सुनायी पड़ीं बोस्निया-हेर्जगोविना में तोपों की घनघनाहट। कुछ वर्षों से यही सिलसिला जारी रहा, इसलिए वहाँ के लोगों ने इसमें किसी नयेपन अथवा विचित्रता का अनुभव नहीं किया। पर, बाद जब तोपों की आवाज़ें बंद हो गयीं तो वे बहुत ही प्रसन्न हुए। स्लावेनिया, क्रोषिया, मेसिडोनिया के साथ-साथ बोस्निया-हेर्जगोविना भी युगोस्लाविया फेड़रेशन से अलग हो गये। इसी मुद्दे को लेकर तीन सालों के पहले इन देशों के बीच युद्ध छिड़ा। अब सेर्बिया, मॉटनीग्रो मात्र युगोस्लाविया फेड़रेशन में हैं।

मेसिडोनिया को छोड़कर बाकी तीनों गणतंत्रराज्यों में हिंसात्मक घटनाएँ घटती आ रही हैं। युगोस्लाविया फेड़रेशन की सेना में सेर्ब अधिक संख्या में हैं। मुख्यतया बोस्निया और हेर्जगोविना में तीव्र स्तर पर ३३ महीने युद्ध चलता रहा। द्वितीय महायुद्ध के बाद याने १९४५ के बाद, यूरोप में छिड़ा यह युद्ध दीर्घकाल तक चला आता हुआ युद्ध कहा जा सकता है।

अधिक संख्यक मुसलमान तथा अल्पसंख्यक क्रोषियनों के साथ सेर्ब युद्ध कर रहे हैं। राजधानी सराजीनो के वैमामिक केंद्र को सेर्बों ने हस्तगत किया। तब से संयुक्त राष्ट्र संघ के शांति-रक्षा दल अपने कर्तव्यों को निभाने में असफल रहे। जहाँ-जहाँ युद्ध भारी मात्रा में जारी था, वहाँ दैनिक जीवन के लिए आवश्यक वस्तुओं को भेजने में भी कठिनाई हुई।

अमेरीका, रूस, फ्रांस, जर्मनी, ब्रिटेन, इन पाँचों देशों ने सम्मिलित एक कमेटी बनायी और इसके द्वारा शांति की स्थापना के लिए अनेकों प्रस्ताव प्रस्तुत किये। लेकिन युद्ध में लगे पक्षों ने पहले इन प्रस्तावों का तिरस्कार किया। आख़िर तय हुआ कि ४९ प्रतिशत प्रदेश सेर्बों को सौंपा जाए और बाकी प्रदेश अन्यों को। पाँचों देशों के इस प्रस्ताव को सत्तारूढ़ मुसलमान शासकों ने स्वीकार किया। क्रोट की प्रजा ने भी इस प्रस्ताव को स्वीकार किया।

इसी समय पर शांति की स्थापना के लिए संयुक्त राष्ट्र संघ की भेजी अमेरीकी सेना पर सेर्बों ने धावा बोल दिया। अमेरीका ने धमकी दी कि ऐसी हालत में बोस्निया को हथियार दिये जाएँगे। तब सेर्बों ने अमेरीकी पूर्व अध्यक्ष जिम्मी कार्टर की सहायता माँगी। जिम्मी कार्टर ने इसके पहले ही अमरिका-कोरिया तथा हैटी के आंतरिक युद्ध को रोकने में भरसक प्रयत्न करके पर्याप्त ख्याति प्राप्त की थी। वहाँ शांति स्थापित करने में ये बहुत हद तक सफल भी हुए थे।

कार्टर ने मुस्लिम नेताओं और सेर्ब नेताओं के साथ चर्चाएँ कीं। उन्होंने सेर्बों से अनुरोध किया कि वे संयुक्त राष्ट्र संघ के शांति-प्रस्ताव को स्वीकार करें। इस प्रयत्न के सप्ताह बाद याने दिसंबर ३१ को दोनों पक्षों ने निर्णय लिया कि चार महीनों तक युद्ध रोक दिया जाए। यह भी निर्णय हुआ कि समस्या का संपूर्ण हल मई के अंत तक हो जाए और इसके लिए आवश्यक चर्चाएँ तुरंत शुरू की जाएँ। इस प्रकार लगभग हज़ार दिनों लगातार युद्ध के बाद बोस्निया में शांति की स्थापना के लिए आवश्यक ठोस क़दम उठाये गये।

साहस अपना-अपना

बीर अपने ही गाँव की लड़की गौरी को बहुत चाहता था। उसने उससे शादी भी करनी चाही। गौरी अपने लिए हीरों का एक हार चाहती थी। उसे खरीदने के लिए कम से कम हज़ार अशर्फ़ियाँ चाहिये। लेकिन इतनी बड़ी रक़म बीर के पास नहीं थी।

बीर ऐसे कोई धंधे जानता नहीं था, जिनसे ज़्यादा से ज़्यादा पैसे कमा सके। इसलिए उसने रसोई का काम सीखा। वह सब के घरों में जाता और तरकारियाँ काटता, दाल पीसता। उससे होनेवाली कमाई से अपने दिन गुज़ारता था। परंतु ऐसे काम करने मात्र से हज़ार अशर्फ़ियाँ कमाना उसके लिए असाध्य कार्य था। पर वह किसी भी हालत में गौरी से शादी करना चाहता था। अपने लक्ष्य की सिद्धि के लिए उसने अनेकों उपाय सोचे। परंतु उसे लगता था कि इन्हें कार्यान्वित करना मेरे लिए संभव नहीं है। इसलिए मन मसोसकर चुप रह जाता था।

ऐसे समय पर उस देश के राजा ने एक घोषणा की। राजा ने अपने घोषणा-पत्र के द्वारा ऐलान किया कि जो साहसपूर्ण श्रेष्ठ कार्य करेगा, उसे दस हज़ार अशर्फ़ियाँ दी जाएँगी।

बीर साहस-भरे काम करने का इच्छुक था। लेकिन था वह बहुत ही कायर। मेंढ़क भी सपने में दिखायी देता तो वह ड़र से काँप उठता था। इसीलिए वह खेती का भी काम नहीं करता था। उसी ग्राम के निवासी राम दादा को बहुत-से उपाय मालूम थे। बीर ने उससे कोई उपाय सुझाने के लिए कहा, जिससे उसके साहस का प्रदर्शन हो।

रामदादा बीर को खूब जानता था। उसने उससे कहा "भय मनुष्य के लिए रोग जैसा है। जिसमें साहस नहीं होता, उसे दवाएँ खाकर अपना रोग कम करते जाना चाहिये; अपने भय को दूर करना चाहिये। निर्भीक ही साहस-भरे काम आसानी से कर पायेगा। तुम चंद्रपुर

कुमार भल्ला

जाओ। वहाँ की पहाड़ी गुफ़ा में एक बैरागी है। उसके पास भय को कम करने के लिए जड़ी-बूटियाँ हैं।''

बीर फ़ौरन गौरी से मिला और कहा ''तुम्हारे लिए ही मैं चंद्रपुर जा रहा हूँ। वहाँ जाकर जड़ी-बूटियाँ खाऊँगा और अपने भय को कम करूँगा। वहाँ से राजधानी जाकर साहस-भरा कार्य करूँगा और धन कमाऊँगा। उस धन से तुम्हारे लिए हीरों का हार खरीदकर ले आऊँगा''।

गौरी हँस पड़ी और बोली ''तुम तो चंद्रपुर जाने की बात कर रहे हो। भैरव तो सीधे राजधानी पहुँचने निकल भी पड़ा है। अगर वह तुमसे पहले ही हीरों का हार लाकर मुझे देगा, तो मैं उसीसे शादी करूँगी''।

भैरव भी गौरी को चाहता था। वह बीर जैसा सुँदर तो नहीं था, लेकिन बड़ा साहसी था। खाली हाथों से वह साँप को पकड़ लेता था। आधी रात को बरगद के पेड़ के नीचे सो जाता था, जहाँ भूत रहते थे। बीर ने सोचा कि क्या मैं उसकी बराबरी कर सकूँगा? फिर भी वह दृढ़ चित्त होकर चंद्रपुर गया। बैरागी से मिला। बीर की बातें सुनकर बैरागी ने कहा ''वह जड़ी-बूटी बगल की गुफ़ा में है। ले आओ''।

बीर ने जैसे ही गुफ़ा में प्रवेश किया, देखा कि वहाँ ढ़ेर के ढ़ेर मेंढक हैं। वह घबड़ा गया और लौटकर बैरागी से बोला ''स्वामी, गुफ़ा तो मेंढकों से भरी हुई है। कैसे ले आ सकूँगा?''

''साँप जान लेते हैं, पर मेंढक कोई हानि नहीं पहुँचाते। जाओ, और जड़ी-बूटी ले आओ। वहाँ मेंढकों के अलावा और कोई जंतु नहीं हैं''। बैरागी ने कहा।

''स्वामी, मुझपर दया कीजिये। आप ही उस जड़ी-बूटी को ले आइये। आपका उपकार इस जन्म में भुला नहीं पाऊँगा।'' बीर ने दीनता से कहा।

''स्वयं लाने पर ही जड़ी-बूटी काम करेगी।'' बैरागी ने बीर को स्पष्ट बता दिया।

अपने भाग्य को कोसता हुआ वह लौट पड़ा। रास्ते में एक घोड़ा-गाड़ी उसे दिखायी पड़ी। उसमें उस क्षेत्र का पहलवान रुस्तुम और उसकी बेटी रागमति थे। रागमति ने बीर को देखकर गाड़ी रुकवायी। वह कड़ुवे स्वभाव की थी,

साथ ही घमंडी भी। इसी कारण बीस साल की होती हुई भी उसकी शादी हो नहीं पायी।

रुस्तुम ने बहुत कोशिशें कीं, पर अपनी बेटी की शादी करा नहीं पाया। इसका एकमात्र कारण था बेटी का कड़ुवा स्वभाव, लापरवाही तथा घमंड।

बीर जैसे ही गाड़ी के पास पहुँचा, रागमति ने उससे कहा "बाप रे बाप, कितने सुंदर लग रहे हो। मैं रुस्तुम की बेटी हूँ। तुमसे शादी करना चाहती हूँ"।

"मैं तो गौरी को चाहता हूँ। उसके अलावा मैं और किसी से भी शादी नहीं करूँगा" बीर ने साफ़-साफ़ कह दिया।

रागमति ने गौरी के बारे में उससे पूरी जानकारी पाने के बाद कहा "तुम तो बुद्धू लगते हो। गौरी दाने-दाने का मुहताज है। मैं पहलवान की बेटी हूँ। मेरा तिरस्कार करके उससे शादी करोगे?" नाराज़ होती हुई उसने पूछा।

'हाँ' के भाव में बीर ने अपना सिर हिलाया। इतने में एक तिलचट्टा उसपर आ गिरा। बीर घबरा गया और ज़ोर से चिल्ला पड़ा। रागमति समझ गयी कि यह तो अव्वल दर्जे का कायर है। उसने धमकी दी "अगर तुम मुझसे शादी नहीं करोगे तो तिलचट्टों से भरे कमरे में तुम्हें क़ैद करूँगा"।

उसकी बात सुनते ही बीर वहाँ से भाग गया। रागमति ने गाड़ी में बैठकर उसका पीछा किया। उस समय भैरव सामने से आ रहा था। उसने गाड़ी रोकी और पूछा कि यह कैसी ज़बरदस्ती हो रही है? रागमति ने पूरा हाल उसे सुनाया।

"मेंढ़कों और तिलचट्टों से डरनेवाले एक कायर से पहलवान रुस्तुम की बेटी शादी करे? यह तो जग-हँसाई की बात हो गयी। ऐसा भीरू पहलवान का दामाद हुआ तो क्या लोग हँसेंगे नहीं?" भैरव ने प्रश्न-किया।

"हाँ, तुमने ठीक कहा। मैं किसी साहसी से ही शादी करूँगी। ऐसे कायर से नहीं। फिर रही सुँदरता की बात। उसपर बाद सोचूँगी" कहती हुई गाड़ी को घुमाती वह निकल गयी।

हाँफते हुए खड़े बीर ने भैरव को धन्यवाद दिया और उससे पूछा 'क्या तुम अभी राजधानी से लौट रहे हो? तुमने वहाँ कौन-सा साहस-

कार्य किया?"

बीर के इस प्रश्न पर हर्षित होता हुआ भैरव बोला "पानी में रहकर एक ही बार दो मगरों से लड़ाई की और उन्हें मारने में क़ामयाब हुआ। राजा ने मुझे दस हज़ार अशर्फ़ियाँ दीं। उस धन से एक सुंदर हीरों का हार खरीदा है। गौरी से जल्दी ही शादी करूँगा।" वह कहे जा रहा था कि इतने में पेड़ से एक जाल उनपर आ गिरा और दोनों उसमें फँस गये।

जाल से अपने को निकालने के लिए बीर और भैरव अपना पूरा बल लगा रहे थे। तब पेड़ से चोर नीचे धड़ाम् से कूद पड़े और भैरव के पास हीरों का जो हार था, छीनकर भाग गये।

थोड़ी देर बाद दोनों किसी प्रकार जाल से निकल पाये। भैरव ने बीर से कहा "हमें मालूम ही नहीं था कि चोर पेड़ पर छिपे बैठे थे। जैसे ही उन्हें मालूम हो गया कि मेरे पास हीरों का हार है, हम पर उन्होंने जाल फेंक दिया। मैं उन्हें छोड़नेवाला नहीं हूँ। उन्हें पकड़ूँगा और हीरों का हार ले आउँगा। इतने में तुम गाँव जाओ और मेरे आने की ख़बर गौरी को देना"।

चोर जिस तरफ़ भागे, उसी तरफ़ भैरव भी भागता हुआ गया। बीर ने गाँव पहुँचकर पूरा समाचार गौरी को बताया।

"चार चोरों को पकड़ने के लिए अकेले ही गया? सचमुच वह तारीफ़ के क़ाबिल है"। भैरव की प्रशंसा करती हुई गौरी ने कहा।

अब यह दृढ़ हो गया कि वह शादी करेगी तो भैरव से ही करेगी। थोड़े ही समय में हीरों का हार लेकर उसका आना भी निश्चित है। ऐसा सोचकर उसने धीरज बाँधकर गौरी से कहा "विवाह का हीरों के हार से क्या संबंध है? तुम्हें धन मुख्य है या प्रेम? मैं तो हीरों का हार नहीं ले आ सकता। मुझे तो चाहिये केवल तुम और तुम्हारा प्रेम। मुझसे शादी करो"।

गौरी हँसकर बोली "मैं भी तुम्हें चाहती हूँ। यह बात पहले ही कहते तो तभी हमारी शादी के लिए मान जाती। अच्छा हुआ, कम के कम अब तुमने यह कहने का साहस किया। तुम्हीं से मेरी शादी होगी"। बीर खुशी से गोल गुप्पा हो गया। इतने में भैरव हीरों का हार लेकर वहाँ पहुँचा।

"तुमने देरी कर दी। तुम जो साहस नहीं

कर सके, वह बीर ने कर दिखाया है। इसलिए मैं बीर से ही शादी करनेवाली हूँ'' गौरी ने कहा।

''मेंढकों और तिलचट्टों से डरनेवाला यह क्या साहस करेगा? ज़रा मैं भी तो सुनूँ'' आश्चर्य भरे स्वर में भैरव ने पूछा।

''साहस का मतलब सिर्फ तलवारों से लड़ना नहीं है। मन की बात को साहसपूर्वक कहना है। बीर धैर्यशाली है, इसलिए उसने पहलवान की बेटी के विवाह के प्रस्ताव को भी ठुकरा दिया। अगर पहलवान नाराज़ हो जाता तो इसकी ऐसी पिटाई करता कि जन्म भर खाट पर ही पडा रहता। अपने मन की बात हिम्मत से कहने की इसमें शक्ति है, इसीलिए उसने अपने मन की बात मुझसे कही। हाँ, मैं भी मानती हूँ कि जब हम एक दूसरे को चाहते हैं तब शर्तों की क्या ज़रूरत? अगर हीरों के हार के लिए मैं तुमसे शादी करती तो क्या वह व्यापार नहीं कहलायेगा। अच्छा हुआ कि ठीक समय पर मेरी आँखें भी खुल गयीं। बीर के प्रेम में सच्चाई है, निस्वार्थता है, इसलिए मेरा विवाह इसी से होगा।'' गौरी ने कहा।

भैरव गौरी की बातों को मानता हुआ बोला ''तुम्हारी बातों में सच्चाई है। मैं साहसपूर्ण काम करने की इच्छा रखता हूँ। ऐसे ही कार्यों की तलाश में रहता हूँ। इसीलिए मैं राजधानी गया। मैं चाहता था कि हर कोई मेरी इज़्ज़त करे, मेरी प्रशंसा करे, इसी के लिए इतना धन देकर मैने हीरों का हार खरीदा था। पहलवान की बेटी की सुंदरता को देखते ही मैं उसपर रीझ गया। उसने जब कहा कि किसी साहसी से ही शादी करूँगी, तब मैं उसकी ओर आकर्षित हो गया। किन्तु अपनी मनोभिलाषा व्यक्त करने का मैं साहस नहीं कर सका। जो साहस, आवश्यकता पड़ने पर उपयोग में नहीं आता, उस साहस से क्या फ़ायदा? एक तरह से बीर ही मुझसे अधिक साहसी है।''

बीर उत्साहित होता हुआ बोला ''तो तुमने मान लिया कि मैं भी साहसी हूँ। चलो, पहलवान की बेटी से तुम्हारी शादी के प्रयत्न में मै भी भरसक सहायता करूँगा। तुम्हारा साहस तुम्हारा अपना है और मेरा साहस मेरा अपना।''

मछलियों का शिकार

चाँद किसी काम पर शहर जा रहा था। रास्ते में उसने तालाब के किनारे एक विचित्र दृश्य देखा। उसने देखा कि दो व्यक्ति अपने हाथों में दर्पण लिये हुए हैं। दर्पण में सूर्य की किरणें प्रतिबिंबित हो रही थीं। वे उनकी कांति को पानी पर प्रसारित कर रहे थे।

चाँद तत्संबंधी विवरण जानने के लिए उनके पास गया। वहाँ पहुँचने पर उसे मालूम हुआ कि उनमें से एक आदमी कृष्ण, उसी के गाँव का है। दूसरा आदमी ऊँचे क़द का था और हट्टा-कट्टा भी। उसकी पोशाक को देखते हुए लग रहा था कि वह शहर का रहनेवाला है। चाँद ने उनसे पूछा "बहुत ही अजीब लग रहा है। आप लोग कर क्या रहे हैं?"

शहरी ने कहा "अनजाने को सब कुछ अजीब ही लगेगा। उसी को दुनिया ही अजीब लगती है। देखते नहीं, हम यहाँ खड़े-खड़े क्या कर रहे हैं? हम तालाब के किनारे हैं, नीचे तालाब है। मछली पकड़ रहे हैं।"

चाँद ने कहा "हाँ, बात सचमुच अजीब ही है। मछलियाँ पकड़ी जाती है जाल बिछाकर, बंसी डालकर। मैने आज तक मछलियों को इस तरह पकड़ते हुए कभी नहीं देखा। आख़िर आप मछलियाँ कैसे फँसा रहे हैं?"

"यह मछलियाँ पकड़ने की कला है। जो यह कला जानता है, उसे ना ही पानी में उतरना पड़ता है, ना ही अपने हाथ-पैरों को मैला करने की ज़रूरत पड़ती है। जाल, बंसी आदि को ढोकर लाने की भी ज़रूरत नहीं होती।" शहरी ने रोब जमाते हुए कहा।

चाँद को उसकी बातों से और ताज्जुब हुआ। शहरी गंभीर स्वर में बोला "हमारे दादा-परदादा ने हमें यह विद्या सिखायी थी। बिना शुल्क लिये मैं थोड़े ही तुम्हें सिखाऊँगा। मुझे इतना बुद्धू ना समझो। इसे देखो। तालाब के किनारे खड़े-खड़े ही इसने यह विद्या सीखी। मछलियों के शिकार का रहस्य जान लिया।

रामकृष्ण

और आज मेरे मुकाबले में खड़ा है। तुम्ही अंदाज़ा लगाओ, इससे मेरा कितना नष्ट होता होगा। अगर तुम भी यह विद्या सीखना चाहते हो, पचास रुपये दो और सीख लो। मैं तुम्हें यह रहस्य बता दूँगा''।

चाँद ने तुरंत अपनी जेब से रुपये निकाले और गिनकर उसे पचास रुपये दिये। रुपये लेकर उसने चाँद से कहा ''पूरा रहस्य इस आइने में छिपा है। हमारी ही तरह बिना हिले-डुले खड़े हो जाओ। सूर्य की किरणों की कांति तालाब के पानी पर पड़ती रहे, इसका ख्याल रखना। और वह कांति बिखर जानी नहीं चाहिये। किसी एक ही जगह पर केंद्रित होनी चाहिये। मछलियाँ ताप को सह ना सकने के कारण थककर पानी के ऊपर आ जाएँगी। बस उन्हें पकड़ना और बाहर लाना ही हमारा काम है''।

चाँद को थोड़ा संदेह हुआ। उसने पूछा ''अब तक कितनी मछलियाँ पकड़ीं।'' उसने कहा ''छे''।

चाँद धोखा, दग़ा कहता हुआ चिल्लाने लगा।

''चिल्लाने से कोई फ़ायदा नहीं। तुम्हारी ही तरह जब तक कोई दूसरी मछली ना आये, तब तक तुम्हें यह आइना पकड़कर खड़ा होना पड़ेगा। अगर तुमने ऐसा किया तो पच्चीस रुपये वापस दूँगा। तुम्हें मंजूर है ना'' कहते हुए उसने पच्चीस रुपये कृष्ण को दिया। वह वहाँ से चला गया।

आधा घंटा बीत गया। उन्होंने देखा कि कृष्ण अपने साथ चार लोगों को लेकर आ रहा है। सब के हाथों में मज़बूत लाठियाँ हैं।

उन्हें देखकर शहरी बाबू पहले तो खुश हुआ, लेकिन बाद उसमें संदेह पैदा हुआ। उसने चाँद से पूछा ''मेरे पास कृष्ण ने मछलियों के शिकार की विद्या सीखी। अब वह यह विद्या सिखाने के लिए चार और लोगों को ले आ रहा है। यह तो ठीक है, पर मेरी समझ में नहीं आता कि सबके हाथों में लाठियाँ क्यों हैं?''

चाँद ज़ोर से हँसता हुआ बोला ''वे तुम्हें सिखाने आ रहे हैं कि लाठियों से कैसे शिकार किया जाता है?''

शहरी बाबू ने तुरंत अपनी ज़ेब से पूरे रुपये निकाले और चाँद के हाथ में थमा दिये। पलटकर देखे बिना वह शहर की ओर भागा।

(ट्रोय राजा का बेटा मोहन भुवनसुँदरी को उठा ले आया। ग्रीकों ने अपने जहाज़ों और सेना को सन्नद्ध किया और ट्रोयनगर पर धावा बोल दिया। पहले दिन ट्रोय की सेना हार गयी और अपने नगर में लौट आयी। फिर ग्रीक की सेना ने ट्रोय नगर को घेर लिया और अड़ोस-पड़ोस के देशों को लूटा। ट्रोय नगर को वे सालों तक घेरे रहे। इन नौ सालों में युद्ध तो संभव नहीं हो पाया, लेकिन ग्रीक शिबिरों के अंदर और बाहर नाना प्रकार की विचित्र घटनाएँ घटीं) - बाद

ट्रोय नगर को घेरे नौ साल गुज़र गये किन्तु ग्रीक युद्ध नहीं कर पाये। शीतकाल का आगमन हुआ। इस काल में युद्ध नहीं होता। इसलिये ग्रीकों ने इस अवधि में अपने शिबिरों को विस्तरित किया। धुनुर्विद्या में अपने को वे और निष्णात करते गये और यों अपना समय बिताते रहे।

युद्धभूमि से थोड़ी ही दूरी पर सूर्यभगवान के एक मंदिर में बलियाँ चढ़ाने ग्रीक और ट्रोजन भी आया-जाया करते थे। ट्रोय नगर के प्रमुखों को ग्रीक उसी मंदिर में कभी-कभी देखा करते थे।

एक दिन वज्रकाय बलि चढ़ाने मंदिर आया था। वर्धन की पत्नी तथा पुत्री प्रमोदिनी भी मंदिर में आयी थीं। प्रमोदिनी अत्यंत सुँदर कन्या थी। उसको देखते ही वज्रकाय उसपर रीझ गया। उसके हृदय में उसके प्रति प्रेम उत्पन्न हुआ। जैसे ही वह शिबिर लौटा,

उसने वीरसिंह के यहाँ एक दूत भेजा। उस दूत ने वीरसिंह से कहा "वज्रकाय आपकी बहन प्रमोदिनी से विवाह करना चाहता है"।

वीरसिंह ने दूत के द्वारा वज्रकाय को संदेश भेजा "तुम अगर अपने ग्रीक शिबिर को छोड़कर मेरे पिता वर्धन के पक्ष में आ मिलोगे तो मेरी बहन से शादी कर सकते हो। अपने ग्रीकों से गद्दारी करना नहीं चाहते हो तो कम से कम एक काम करो। अपने वीरों में से भूधव तथा कुछ वीरों को ख़तम कर दो। तुम्हें प्रतिज्ञा करनी पड़ेगी और हमे विश्वास दिलाना होगा कि तुमने यह काम कर दिखाया है"।

वज्रकाय इन शर्तों को मान नहीं पाया। अब शीतकाल समाप्त हो गया और वसंतऋतु का आरंभ हुआ। साथ-साथ युद्ध का भी प्रारंभ हो गया। युद्ध के दौरान वज्रकाय ने वीरसिंह से मिलने की बहुत कोशिशें कीं। लेकिन वह सफल नहीं हो पाया। एक बार जब वह वीरसिंह से मिलने जा रहा था, तब उसके एक भाई ने उसकी हथेली को बाण से घायल कर दिया।

युद्ध की स्थिति को देखते हुए स्पष्ट लग रहा था कि देवता ग्रीकों के पक्ष में नहीं, प्रतिकूल हैं।

पहले वज्रकाय ने ट्रोय के अड़ोस-पड़ोस के राज्यों को लूटा था। तब कितनी ही स्त्रीयाँ बाँदियों के रूप में उसे मयस्सर हुई। इनमें से हेमा और भामिनी नामक दो बाँदियाँ थीं। ग्रीक वीरों ने जब इन बाँदियों को आपस में बाँटा, तब हेमा राराजा को और भामिनी वज्रकाय के अधीन हुई।

हेमांबर हेमा के पिता का नाम था। वह सूर्योपासक था।

वह अपनी बेटी को राराजा से वापस लाना चाहता था, इसलिए उसने राराजा को बहुत-सी क़ीमती भेटें समर्पित कीं। उसने राराजा से सविनय प्रार्थना की कि मेरी पुत्री मुझे लौटा दी जाए।

राराजा ने उसकी प्रार्थना ठुकरा दी। उसकी भेटें वापस कर दीं और उसे ख़ूब

गालियाँ देकर निकलवा दिया। जब से यह घटना घटी, तब से ग्रीकों के शिबिरों पर बाणों की वर्षा होती रही। किसी को भी यह मालूम नहीं हो पाया कि कहाँ से बाणों की यह बौछार हो रही है। इस कारण बहुत-से ग्रीक सैनिक इन बाणों के शिकार हुए। दस दिनों के बाद ग्रीक नौकाओं के मार्गदर्शक बनकर आये हुए कांशुक ने इस रहस्य को जाना।

कांशुक ने ग्रीक सेनाधिपतियों को बताया "हेमांबर सूर्योपासक है। सूर्य का अत्यंत प्रिय है। वह अपनी पुत्री को छुड़ाने आया तो राराजा ने उसे गालियाँ देकर खाली हाथ वापस भेजा। उसने निष्ठा से सूर्यभगवान की पूजा की। फलस्वरूप सूर्यभगवान ही हमपर ये बाण फेंककर हमें दंड दे रहे हैं। हम अगर इस ख़तरे से अपने को बचाना चाहें तो एक ही उपाय है और वह है हेमा की मुक्ति। हमें चाहिये कि हेमा तुरंत उसके पिता के पास सादर भेजी जाए।"

राराजा ने उसकी बातों का विश्वास किया। हेमा को उसके पिता हेमांबर के पास भेज दिया। अब उसने वज्रकाय की बाँदी भामिनी को अपना बना लिया। उसने सोचा कि कोई भी इसका विरोध करने का साहस नहीं करेगा।

राराजा के इस कार्य पर वज्रकाय क्रोधित हो उठा। उसने घोषणा की "अब इस लड़ाई से

मेरा कोई सरोकार नहीं। आगे से मैं युद्ध में भाग ही नहीं लूँगा"। वह तो पहले ही प्रमोदिनी से प्रेम कर चुका था। उसके पिता वर्धन को संतृप्त करने के लिए अब उसे सुवर्ण अवकाश प्राप्त हो गया। वज्रकाय के साथ-साथ उसकी सेना भी युद्ध-भूमि से हट गयी।

वज्रकाय की इस प्रतिज्ञा से ट्रोजनों के आनंद की सीमा ना रही। वज्रकाय जैसे महान योद्धा का रण-रंग से हट जाना उन्हें देवताओं का दिया वरदान-सा लगा। वे बड़े उत्साह से ग्रीकों पर बहुत बड़े पैमाने पर पिल पड़े। उनके हमले से राराजा घबड़ा गया, दिल काँप उठा। उसने युद्ध की समाप्ति का संदेश ट्रोजनों को भेजा।

छोड़ा। देवमय इसपर बहुत नाराज़ हुआ और उसने कंटक को वहीं का वहीं मार डाला। उसने प्रशंसन को घायल भी किया।

तदनंतर वीरसिंह ने वज्रकाय को द्वंद्व युद्ध के लिए निमंत्रित किया। किन्तु वज्रकाय ने ख़बर भेजी कि मैं युद्ध-क्षेत्र से हट गया हूँ। ग्रीकों ने भूधव को वीरसिंह से द्वंद्व युद्ध करने के लिए चुन लिया, क्योंकि वज्रकाय के बाद भूधव ही ग्रीक के माने-जाने वीरों में से था।

वीरसिंह और भूधव ने सूर्यास्त तक द्वंद्व युद्ध किया, किन्तु ना ही कोई हारा था ना ही कोई जीता। वे दोनों समान रहे। सूर्यास्त होते ही उन्होने युद्ध रोक दिया। दोनों ने एक दूसरे के कौशल की प्रशंसा की और दोनों ने आपस में एक दूसरे को पुरस्कार भी दिये। दोनों पक्षों ने निर्णय कर लिया कि अब युद्ध की समाप्ति हो। ग्रीकों ने युद्ध में मरे अपने सैनिकों को एक गढ़े में गाड़ दिया और वहाँ एक ऊँचा टीला बनाया। उसपर एक दीवार भी खड़ी कर दी। इस दीवार के सामने उन्होने एक गहरी खाई खोदी और उसके सामने बाड़ा लगाया।

कुछ समय के बाद पुनः युद्ध शुरु हो गया। इस युद्ध में ग्रीक बहुत बुरी तरह से पिटे। ट्रोजनों ने उन्हें दूर खदेड़ा। उस रात को ट्रोजन समुदी तट पर पहुँचे और ग्रीकों के जहाज़ों से थोड़ी दूर अपने डेरे डाले।

ग्रीक का सर्वसेनानी राराजा इन परिणामों को देखते हुए बहुत निराश हुआ। वह किसी

युद्ध रुक गया। यह युद्ध छिड़ा था भुवनसुँदरी को लेकर। निर्णय हुआ कि वह किसकी बनकर रहे। इसके लिए भुवनसुँदरी के पति प्रताप और उसे उठाकर ले जानेवाले मोहन मे द्वंद्व युद्ध हो। और इस द्वंद्व युद्ध में जो जीते, वह उसकी बनकर रहे। प्रताप और मोहन में द्वंद्व युद्ध हुआ भी। लेकिन यह अनिर्णीत ही रहा। क्योंकि मोहन बीच ही में ग़ायब हो गया। बताया गया कि मायादेवी ने अपनी माया से उसे ग़ायब कर दिया और उसे ट्रोय नगर पहुँचा दिया।

द्वंद्व युद्ध से कोई निर्णय नहीं हो पाया, उल्टे युद्ध-समाप्ति में इससे रुकावट भी पैदा हो गयी। कंटक नामक एक ट्रोजन वीर ने प्रताप पर बाण

तरह से वज्रकाय को युद्ध-क्षेत्र में ले आने की सोचने लगा। उसे मालूम था कि ऐसा ना करने पर उनकी हार निश्चित है। रक्तवर्ण, भूधव, रूपधर और दो वीर राराजा की तरफ़ से वज्रकाय के पास समझौते के लिए गये। राराजा ने उनके द्वारा असीम पुरस्कार वज्रकाय को भेजे और कहलाया "अपनी भामिनी को ले लो और युद्ध में भाग लो"।

भामिनी को, वज्रकाय को सौंपने के इरादे के पीछे दूसरा कारण भी था। क्योंकि पिता के पास भेजी गयी हेमा ने अपने पिता से कहा था "मैं यहाँ नहीं रहूँगी। राराजा के पास ही वापस जाऊँगी, क्योंकि मैं वहाँ बड़े आराम से अपनी जिन्दगी गुज़ार रही थी।" उसने अपने पिता का कहा भी नहीं सुना। राराजा के पास लौट आयी।

राराजा के दूतों से वज्रकाय ने बहुत अच्छी तरह सलूक किया। उसने उनसे मीठी-मीठी बातें की, लेकिन अपने निर्णय को बदलने से साफ़ इनकार कर दिया। उसने कहा "कल ही अपने जहाजों को लेकर अपना देश लौट रहा हूँ।"

उसी दिन रात को रूपधर और देवमय ने ट्रोजन के शिबिरों पर हमला करने का निश्चय किया। जब वे उस काम पर जा रहे थे तब रास्ते में उन्हें ट्रोजनों का एक जासूस दिखायी पड़ा। दोनों ग्रीक वीरों ने उसे अपने वश में कर लिया। उसे खूब पीटा और उससे शत्रुओं के बहुत-से रहस्यों को उगलवाया। फिर उसे मार डाला।

उसने एक बहुत ही मुख्य रहस्य बताया था, जो यों था :- त्रेस देश का राजा विच्छेदन थोड़े दिनों के पहले ही ट्रोजन आया था। अपने साथ वह बड़ी सेना भी ले आया था। साथ ही दूध के रंग के बिलकुल श्वेत अश्व भी ले आया था। वायू वेग से भी तेज़ ये घोड़े दौड़ सकते हैं। प्रतीति थी कि ये ट्रोय नगर में चरें और इस नगर के दक्षिण में बहनेवाली स्कामंदर नदी का पानी पियें तो ट्रोय नगर को कोई भी जीत नहीं पायेगा। विच्छेदन के घोड़ों ने ये दोनों काम अब तक नहीं किया। उस जासूस के द्वारा उन्हें मालूम भी हुआ कि विच्छेदन उस

रात को फलाने डेरे में ठहरा हुआ है। रूपधर और देवमय गुप्तचर को मारने के बाद विच्छेदन के डेरे में पहुँचे। वहाँ पहुँचकर घोड़े बेचकर सोये हुए विच्छेदन तथा उसके बारहों अनुचरों को मौत के घाट उतार दिया। उन श्वेत अश्वों को लेकर सहर्ष अपने शिविरों में लौटे।

थोड़ी देर बाद विच्छेदन के आदमियों ने उठकर देखा कि मालिक और उसके अनुचर मार डाले गये हैं और अश्वों की भी चोरी हो गयी है। वे घबड़ा गये और जब लौटने दौड़ पडे, तो ग्रीकों ने रास्ते में उन्हें पकड़ लिया और मार डाला।

इतना सब कुछ होने के बाद भी दूसरे दिन भी युद्धक्षेत्र में ग्रीकों की बुरी हालत हुई। कहना पड़ेगा कि ट्रोजन के हाथों उन्होने ऐसी बुरी हार कभी नहीं चखी। राराजा, देवमय, रुपधर आदि सबके सब मुख्य वीर युद्धक्षेत्र में घायल हुए।

वीरसिंह महान वीर था। रणरंग में सिंह की तरह वह गरजता और शत्रुओं पर टूट पड़ता था। उसकी शक्ति व पराक्रम के सामने ग्रीक वीर टिक नहीं पाये। उसने ग्रीकों को युद्ध-क्षेत्र से भगाया। उनके भाग जाने पर भी उसे तसल्ली नहीं हुई, वह उन्हें दूर तक खदेडता रहा। सब ग्रीक वीरों ने अपना पूरा बल लगाया, सब प्रकार के प्रयत्न किये, किन्तु वीरसिंह की वीरता के सामने उनकी कोई दाल नहीं गली। उनके सब प्रयत्न विफल हो गये।

भूधव ने फरसा फेंका, जो वीरसिंह को जा लगा। क्षण भर के लिए ऐसा लगा, मानों वह मूर्छित होकर गिर गया हो। परंतु वह संभल गया और अपनी सेना को उत्तेजित करने लगा, उन्हें असीम प्रोत्साहन देने लगा।

देखते-देखते ट्रोजन ग्रीक नौकाओं के पास पहुँचे। एक नौका में उन्होने आग लगायी। वह चंद्रप्रभु की नौका थी। ग्रीक नौकाएँ जब ट्रोय के समुद्री तट पर पहुँचीं, तब सबसे पहले भूमि पर कूदनेवाला साहसी चंद्रप्रभु यही था और यही वह ग्रीक वीर था, जो सबसे पहले स्वर्ग सिधारा।

-सशेष

'चन्दामामा' की ख़बरें

आराम से गाड़ी चलाओ

हाल ही में एक ऐसा स्कूटर बनाया गया है, जिसपर पीछे सटकर आराम से आप बैठ सकते हैं और चला सकते हैं। उसपर बैठकर चलाते हुए आपको लगेगा कि पहियों की कुर्सी में आप आसीन हैं और विश्राम कर रहे हैं। तीन पहियों के इस स्कूटर का एक-एक पहिया ६० सें.मीटर का है। (१६ अंगुल) यह उतार-चढ़ावों को भी आसानी से पार कर सकता है। इस वाहन में २४ वोल्टेज मोटर लगाया जाता है। तीन पुष बटनों का भी इसमें प्रबंध हुआ है। यह तेज़ी से, धीरे, आगे और पीछे आ-जा सकता है। इसमें तीन प्रकार की रोक-थाम की पद्धतियाँ हैं। अगर आप चाहें तो इसके पुर्ज़ों को अलग-अलग कर सकते हैं और मोटरकार के पीछे डालकर ले जा सकते हैं। क्या आप जानते हैं कि इतनी सुविधाओं से युक्त यह गाड़ी किनके लिए बनायी गयी? यह उन बच्चों के लिए नहीं, जिनके हाथ-पैर सही-सलामत हैं। यह बनाया गया है अपाहिजों के लिए।

गाने में रिकार्ड

मद्रास के कालेजों के कुछ विद्यार्थियों ने 'लक्ष्मण श्रुति' नामक एक संगीत-सभा स्थापित की। इस संस्था के द्वारा वे ललित संगीत गाते तो हैं, पर ये मुख्यतया गाते हैं चित्रपटों के गीत। यों श्रोताओं का वे भरपूर मनोरंजन करते हैं। पिछले दिसंबर १७ को इन्होंने लगातार ३६ घंटों तक चित्रपटों के गीत गाये और नया रिकार्ड क़ायम किया। इन्होंने "गिन्नीस बुक आफ वर्ल्ड रिकार्ड्स" के अधिकारियों को लिखा था कि उनकी पुस्तक में इसका उल्लेख हो और उनके प्रयास और सामर्थ्य संसार भर में ज्ञात हों।

वेग ही वेग है, किन्तु ख़तरा नहीं

'षिन कान्सेन्' नामक बुलेट रेल-गाड़ी पिछले तीस सालों से जापान के नगर टोक्यो-ओसाका में दौड़ रही है। हर घंटे में २२० कि.मीटर के वेग से यह दौड़ती है। परंतु आज तक किसी प्रकार की दुर्घटना नहीं घटी। इस रेल-गाड़ी का दौड़ना शुरु हुआ, १९६४ अक्तूबर पहली तारीख़ को। जापान में दौड़नेवाली सब रेल-गाड़ियाँ के लिए यह 'मार्गदर्शी' कही जा सकती है। इसके बाद जो रेल-गाड़ियाँ चलायी गयीं, वे रोक दी गयीं। लेकिन यह रेल-गाड़ी बरक़रार रही। घंटे में २७० मीटरों के वेग से दौड़नेवाली 'नोजोमी' नामक रेल-गाड़ी १९९२ में प्रविष्ट हुई। फिर भी कुछ कठिनाइयों की वजह से इसे चला नहीं पा रहे हैं।
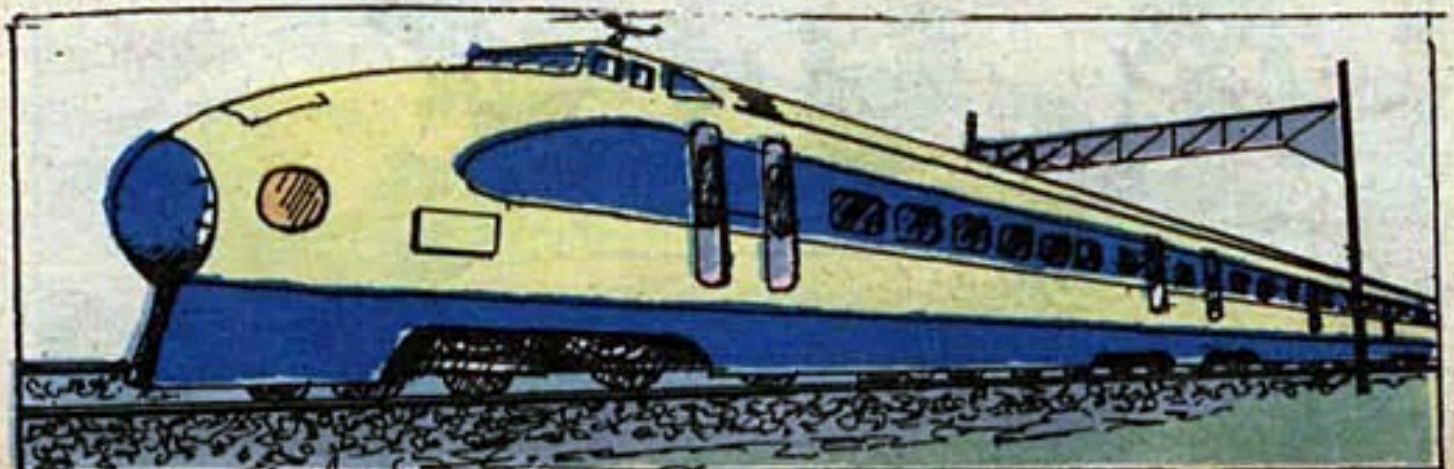
राक्षस का दान

"राजन्, मैं तुम्हें समझाते-समझाते थक गया हूँ, परंतु तुम तो थकने का नाम ही नहीं ले रहे हो। अगर भगवान भी प्रत्यक्ष हो जाएँ, तो मुझे लगता है कि तुम उनसे कोई वरदान नहीं माँगोगे। अपने लक्ष्य की प्राप्ति की धुन में ही लगे रहोगे। आख़िर कब तक? क्या अब तक कभी तुम अपने प्रयत्न में सफल रहे? नहीं, हमेशा विफल ही रहे। नाना प्रकार की यातनाएँ सहने तैयार हो, लेकिन अपना हठ नहीं छोड़ रहे हो। मनुष्य परिणाम की आशा में परिश्रम करता है। जब उसका परिश्रम व्यर्थ जाता है और उसके प्रयास सफल नहीं हो पाते, तब कोई दूसरा रास्ता ढूँढ लेता है। और तुम? तुम तो एक ही प्रकार के प्रयास में रत हो। अब भी कुछ नहीं बिगड़ा। मेरी बात मानो और यह ज़िद छोड दो।" बेताल ने विक्रमार्क को समझाया। किन्तु शव को पेड़ से उतारकर कंधे पर डाले विक्रमार्क चुपचाप श्मशान की ओर बढ़ता गया। बेताल

बैताल कथा

ने फिर से उसे समझाने का प्रयत्न किया "देखो राजन्, घनघोर अंधकार है। आँखें फाड़कर भी देखोगे तो कुछ भी दिखायी नहीं पड़ता। मुझे तुम पर दया भी आती है और क्रोध भी। क्योंकि, जो केवल अपने स्वार्थ के लिए, केवल अपनी भलाई के लिए किसी अलौकिक शक्ति को प्राप्त करने का इरादा रखता है तो, जब कोई रुकावट आ जाए या उसे लगे कि उसका लक्ष्य पूरा नहीं हो पायेगा तो वह ठंडा पड़ जाता है। उसकी आत्म:शक्ति क्षीण हो जाती है, उसका धैर्य लुप्त हो जाता है और वह अपना प्रयत्न रोक देता है। किन्तु स्वार्थरहित व्यक्ति किसी को दिये गये वचन को पूरा करने के लिए या समाज के कल्याण के लिए जो काम अपने हाथ में लेता है, उसको सफल बनाने के लिए उसमें कृतकृत्य होने के लिए ज़रूरत पड़े तो अपनी आहुति भी दे देता है। परंतु कुछ ऐसे हठी भी होते हैं, जिन्हें मालूम नहीं पड़ता कि कौन-सा काम स्वत: के लिए लाभदायक है और कौन-सा काम समाज के कल्याण के लिए। मुझे शंका भी हो रही है कि इतने कष्ट उठाने के बाद जो फल तुम्हें प्राप्त होगा, उसे तुम किसी अपात्र की झोली में डाल दोगे। बड़ों ने कहा भी है कि अपात्रदान पाप है। यह पाप मनुष्य करें या देवता या राक्षस सब के सब दंडनीय हैं। मैं तुम्हें बताऊँगा कि रक्ततर्पण नामक राक्षस ने, अलौकिक शक्तियोंवाला मणि पाकर भी उसे एक अपात्र को दान में देकर कितना बड़ा पाप किया। थकावट दूर करते हुए उसकी कहानी सुनो।" और बेताल यों सुनाने लगा।

दंडकारण्य में रक्ततर्पण नामक एक राक्षस था। एक ओर हिमगिरि था तो दूसरी ओर सिंहपुरी। इसलिए बहुत से मुसाफ़िर उस जंगल से गुज़रते रहते थे। कोई भी रक्ततर्पण के हाथों से बच नहीं पाता था। जो मिलता, उसे वह खा जाता था।

एक बार चंद्रकांता नामक एक गंधर्व कन्या भूलोक की विचित्राओं को देखने भूमि पर उतरी। उसका सौंदर्य अद्भुत था। वह बड़ी ही दयालू स्वभाव की थी। जब वह दंडकारण्य में विहार कर रही थी, तब उसके गले का एक मणि फिसलकर नीचे गिर गया। चंद्रकांता ने

इसपर गौर नहीं किया। थोड़ी देर बाद वह वहाँ से गंधर्वलोक लौट गयी।

रक्ततर्पण यात्रियों की खोज में था, तो उसे चंद्रकांता का खोया मणि दिखायी पड़ा। उससे विचित्र कांतियाँ प्रकाशित हो रही थीं। रक्ततर्पण को वह बहुत अच्छा लगा। उसने उठाया और उसे अपने गले में डाल लिया।

उस मणि को पहनते ही रक्ततर्पण में कायापलट हो गया। उसके मन के विचारों में आमूल परिवर्तन आ गया। अति क्रूर उसका हृदय दया, करुणा आदि भावों से भर गया।

एक दिन जब वह पेड़ के नीचे बैठा हुआ था तब धर्मविद नामक एक मुनि ने उसे देखा। मुनि अद्भुत तपोशक्ति रखता था।

रक्ततर्पण की चिंता का कारण अपनी तपोशक्ति से मुनि जान गया। वह उसके समीप आकर बोला "राक्षस, तुम्हारा व्यवहार तुम्हें ही विचित्र लग रहा है ना? इसका कारण है, तुम्हारे गले में लटकता हुआ वह मणि। यह मणि दयालू स्वभाव की गंधर्वकन्या चंद्रकांता का है। इस मणि में मन की इच्छाओं को पूर्ण करने की अद्वितीय शक्ति है। इसलिए तुम अगर दूसरों की सहायता करने का उद्देश्य रखते हो तो मनुष्य रूप धारण कर सकते हो और दूसरों की सहायता कर सकते हो।" कहकर मुनि वहाँ से चला गया।

मुनि की बातें सुनने के बाद रक्ततर्पण ने मणि के प्रभाव की परीक्षा करनी चाही। उसने मन ही मन मनुष्य बनने की इच्छा प्रकट की। क्षण भर में वह मनुष्य के रूप में परिवर्तित हो गया। उस दिन से रक्ततर्पण जंगल से गुज़रते हुए मुसाफ़िरों की मदद करने लगा। उन्हें लूटनेवाले लुटेरों का अंत कर दिया। यात्री पीने के लिए पानी का अभाव महसूस ना करें, इसके लिए जंगल में बहुत-सी जगहों पर कुएँ खोदे। काँटों की झाड़ियों को काटकर मार्ग सुगम कर दिया।

किन्तु एक अप्रत्याशित बाधा उपस्थित हो गयी। मुनि धर्मविद जब रक्ततर्पण को मणि की महिमा बता रहा था, तब पेड़ पर छिपे बैठे हुए आदित्य नामक सिंहपुरी के गुप्तचर ने सुन लिया। सिंहपुरी के राजा विक्रमभूपति में सम्राट बनने की आकांक्षा हद से बढ़कर थी। उसने पड़ोसी राज्य हेमगिरि पर अकस्मात् आक्रमण करके

उसे हथिया लेने की एक गुप्त योजना बनायी।

हेमगिरी का राजा विजयादित्य धर्मप्रभु था। उसके शासन-काल में देश सुसंपन्न था। प्रजा को किसी प्रकार की तक़लीफ़ें नहीं थीं। वे आनंद से सुखमय जीवन व्यतीत कर रहे थे।

विक्रमभूपति की युद्ध-योजना का समाचार जानकर विजयादित्य घबड़ा गया। इसका कारण था - हेमगिरि आर्थिक तथा सेना-बल में सिंहपुरी से कमज़ोर था। विजयादित्य ने संधि का संदेश भेजा, किन्तु वह ठुकरा दिया गया। अब युद्ध अनिवार्य हो गया।

सिंहपुरी का गुप्तचर आदित्य सिंहपुरी पहुँचा और राजा को सब कुछ सुनाया, जिसे उसने सुना और देखा। उसने यह भी राजा से बताया कि राक्षस से वह मणि प्राप्त किया जाए तो अड़ोस-पड़ोस के सब राज्यों पर हमारा आधिपत्य संभव है।

गुप्तचर की बातें सुनकर विक्रमभूपति को लगा कि मानों अभी मैं सम्राट बन गया हूँ और मुझसे शत्रुता मोलने का साहस किसी में नहीं। वह खुशी के मारे पागल हुआ जा रहा था। रक्ततर्पण की सहायता पाने वह रथ में बैठकर जंगल की ओर निकल पड़ा।

इसी समय हेमगिरी का राजा विजयादित्य बहुरूपिया बनकर नगर में घूमने लगा। वह जानना चाहता था कि उसकी जनता आनेवाले युद्ध के बारे में क्या सोच रही है, उनके क्या विचार हैं? एक जगह पर पेड़ की शीतल छाया में विश्राम करता हुआ मुनि धर्मविद उसे दिखायी पड़ा। विजयादित्य ने उस मुनि के मुखमंडल पर

अद्भुत तेजस्व देखा। वह उसके पास गया और विनयपूर्वक हाथ जोड़कर खड़ा हो गया।

धर्मविद ने राजा को नख से शिख तक ग़ौर से देखा। उसने कहा "राजन्, तुम्हारे मन की वेदना को मैं समझ गया हूँ। सिंहपुरी के राजा विक्रमभूपति का सामना करना है तो उसका एक ही उपाय है। तुम तक्षण ही दंडकारण्य जाओ। वहाँ रक्ततर्पण नामक एक राक्षस है। वह आजकल मणि के प्रभाव से मानव बन गया है। जो विपत्ति में फंसे हैं, उनकी सहायता कर रहा है। उसके गले में लटकते हुए मणि को देखने पर तुम उसे आसानी से पहचान पाओगे। तुम उसे अपनी स्थिति का विवरण दो। उस प्रभावशाली मणि को पाने का यत्न करो"।

विजयादित्य, रक्ततर्पण से मिलने तुरंत घोड़े पर बैठकर निकल पड़ा। लेकिन इसके पहले ही सिंहपुरी का राजा विक्रमभूपति मानव-रूपधारी राक्षस रक्ततर्पण से मिला। उससे उसने कहा, "राक्षसोत्तम, आपके बारे में मैंने सब कुछ सुना है। मैं सिंहपुरी का राजा विक्रमभूपति हूँ। अन्य देशों के राजा आपस में लड़-झगड़ रहे हैं। एक दूसरे का नाश करने पर वे तुले हुए हैं। मैं उन सब देशों को अपने अधीन करना चाहता हूँ। उन सबको अपने अधीन करके उनका सम्राट बनना चाहता हूँ। प्रजा को सुखी रखने और जन-कल्याण के लिए ही मैं यह बीड़ा उठाना चाहता हूँ। इस आशय में मेरा कोई स्वार्थ नहीं है। यह आपकी कृपा से ही संभव हो सकता है, इसीलिए आपके दर्शनार्थ आया हूँ। यह प्रभावशाली मणि मुझे प्रदान करेंगे तो बड़ी कृपा होगी। यह जन-

सिंहपुरी का राजा विक्रमभूपति मेरे देश पर आक्रमण करके उसे अपने देश का भाग बनाना चाहता है। उसकी नीयत बुरी है। आपके मणि की सहायता ना हो तो उसे जीतना मेरे लिए असंभव है। मेरा विश्वास है कि आप अवश्य-ही मेरी सहायता करेंगे।''

रक्ततर्पण ने कहा ''राजन्, चिंतित मत होना। मैं तुम्हारे देश में आऊँगा और स्वयं देखूँगा कि वहाँ की प्रजा की क्या स्थिति है। तभी मैं किसी निर्णय पर आ पाऊँगा। तुम्हारे शत्रु विक्रमभूपति को भी मैने ऐसा ही वचन दिया है''। विजयादित्य ने रक्ततर्पण को नमस्कार किया और अपना देश लौटा।

रक्ततर्पण पहले हिमगिरि देश में गया। वहाँ की गतिविधियों को देखने के बाद उसे लगा कि विजयादित्य धर्मप्रभु है और उसके राज्य में प्रजा सुखी हैं। उसे मालूम भी हुआ कि सिंहपुरी का राजा आक्रमण की तैयारियों में लगा हुआ है। वह वहाँ से सिंहपुरी गया। वहाँ उसने अच्छी तरह से जान लिया कि विक्रमभूपति क्रूर व अत्याचारी राजा है।

कल्याणकारी कार्य तभी संभव हो सकता है। इससे आपको पुण्य मिलेगा, क्योंकि इस मणि के प्रभाव से मैं जनता की सेवा कर पाऊँगा। उनके कष्टों को दूर कर पाऊँगा। उन्हें सुखी रखूँगा''।

उत्तर में रक्ततर्पण ने कहा ''मुझे ऐसा करना हो तो पहले तुम्हारे देश में आना होगा और देखना होगा कि तुम शासन कैसे चला रहे हो। इसके बाद ही मैं निर्णय कर पाऊँगा कि तुम्हें मणि दूँ या नहीं।''

विक्रमभूपति ने राक्षस को अपनी कृतक्षता प्रकट की और राजधानी लौट गया।

दूसरे दिन विजयादित्य जंगल में आया। उसने राक्षस को पहचाना और उससे कहा ''महोदय, मैं हेमगिरि का राजा विजयादित्य हूँ।

रक्ततर्पण सोच में पड़ गया कि इन दोनों राजाओं में से किस राजा को मणि दिया जाए और इसे पाने का असली हक़दार कौन है? आख़िर वह राजा विक्रमभूपति से मिला और उससे कहा ''मैं तुम्हें यह मणि दे रहा हूँ। स्वीकार करो''। उस मणि को देकर वह जंगल लौटा।

बेताल ने विक्रमार्क को यह कहानी सुनायी

और कहा "राजन्, रक्ततर्पण का यह दान अपात्रदान है। विक्रमभूपति क्रूर और अत्याचारी राजा है। निरंकुश राजा है। उसके शासन-काल में प्रजा दुखी है। उनपर तरह-तरह के अत्याचार ढ़ाये जा रहे हैं। अलावा इसके, वह दूसरे देशों को भी निगल लेना चाहता है, उन्हें अपने देश का अविभाज्य अंग बनाना चाहता है। सम्राट कहलाने का इच्छुक है। स्वयं रक्ततर्पण को यह मालूम भी है। ऐसे महत्वाकांक्षी, अयोग्य व अत्याचारी राजा को मणि सौंपने का मतलब यह हुआ कि वह ऐसे राजा को और प्रोत्साहन देना चाहता है। ऐसे राजा को मणि सौंपने का निर्णय अपात्रदान ही होगा। राक्षस का यह निर्णय मेरी दृष्टि में अनुचित व अन्यायपूर्ण है। ऐसा करके उसने अक्षम्य अपराध किया है। विक्रमभूपति को ही मणि देना न्यायसंगत है। क्योंकि वह धर्मात्मा है, शांत स्वभाव का है, प्रजा का हित चाहता है। मेरे इन संदेहों का समाधान जानते हुए भी तुम मौन रह गये तो तुम्हारा सिर फटकर टुकड़ों में बँट जायेगा।"

विक्रमार्क ने उत्तर में कहा "रक्ततर्पण का किया हुआ काम बाहर से अविवेक से भरा लगेगा। लगेगा कि यह अपात्र दान है। किन्तु उसने अपने स्वानुभव के आधार पर बहुत ही विवेक से काम लिया है। उसका क्रूर स्वभाव था। उस मणि के ही कारण उसमें आमूल परिवर्तन हो गया। क्रूरता की जगह पर उसमें दया, करुणा आदि ने घर कर लिया। उसने सोचा, सम्राट बनने की दुराशा से दूसरे देशों पर आक्रमण करने की विक्रमभूपति की प्रवृत्ति में परिवर्तन ला सकता है यह मणि। यह मणि ही उसे सुयोग्य व सक्षम राजा बना सकता है। उसमें जन-कल्याण की भावना को प्रेरित कर सकता है। वस्तुतः सात्विक तथा शांत, धर्म के मार्ग पर चलनेवाले विजयादित्य पर इस मणि का कोई प्रभाव नहीं होगा। क्योंकि उसमें ये सद्गुण पहले से ही निहित हैं। यह सब सोचने के बाद ही रक्ततर्पण ने सही व्यक्ति को मणि दान में दिया है। और उसका यह निर्णय नितांत संगत व न्यायपूर्ण है।

इस प्रकार बेताल विक्रमार्क का मौन भंग कर पाया। वह शव सहित अदृश्य हो गया।

आधार - राम नारायण त्रिपाठी की रचना

जन्म-कुँडली

लावन्या धर्मपुरी के राजा अनंगपाल की इकलौती बेटी थी। वह बड़ी ही सुंदरी थी। उससे पढ़े गये शास्त्रों में से ज्योतिष-शास्त्र भी एक था। जब वह सयानी हो गयी तब राजा उसके लिए योग्य वर ढूँढ़ने लगा।

एक दिन राजकुमारी ने अपने पिता से कहा "पिताजी, मेरी जन्म-कुँडली में लिखा हुआ है कि मेरा पति सम्राट होगा। राजकुमारों की जन्म-कुँडलियाँ भी मंगाइये। जो भाग्यशाली सम्राट बनेगा, उसीसे मैं विवाह करूँगी"।

राजा ने अपनी पुत्री के इच्छानुसार बहुत-से राजकुमारों की जन्म-कुँडलियाँ मंगवायीं। साथ-साथ उनकी तस्वीरें भी मंगवायीं। उन सब को परखने के बाद राजकुमारी ने निर्णय कर दिया कि उनमें से कोई भी सम्राट नहीं बनेगा। कोई भी इतना भाग्यशाली नहीं कि सम्राट बन सके।

राजा ने उससे कहा "पुत्री, अब जन्म-कुँडलियों की बात भुला दो। उनकी तस्वीरें देखो और उनके रूप-रंग को देखकर उनमें से किसी को अपना पति चुनो। तब तुम्हारे गुरु ज्योतिषमार्तान्ड तुम्हारे चुने हुए उस राजकुमार के सम्राट बनने की संभावना की परीक्षा करेंगे।"

दूसरे ही दिन राजकुमारी ने पड़ोसी देश के राजकुमार का चित्र देखा और उसपर मुग्ध हो गयी। राजा ने तक्षण ही मुहूर्त निकलवाया और बड़े वैभव से उनका विवाह करवाया।

गुरु ज्योतिषमार्तांड काशी की यात्रा पर था। अब भला उसके पति की जन्म-कुँडली की परीक्षा कौन करे? राजकुमारी ने इस बारे में अपने पिता से अपना संदेह व्यक्त किया।

राजा मुस्कुराता बोला "तुम्हारी जन्म-कुँडली में तो लिखा हुआ है कि तुम्हारा पति सम्राट बनेगा। इसलिए यह कोई आवश्यक नही है कि दामाद की जन्म-कुँडली की भी जाँच हो।"

\- भवानी

हमारे देश के क़िले - १

प्राचीन दुर्ग

पुरातत्व अनुसंधान-शाखा ने, लगभग १९६० में, राजस्थान की सूखी हुई सरस्वती नदी के तट पर के खंडहरों की खुदाई का काम आरंभ किया। वहाँ प्राप्त काली चूड़ियों के आधार पर उन्होंने उस नगर का नाम रखा 'काली बंगा' (काली-काली, बंगा - चूड़ियाँ) यह नगर ई.पू. २२०० - १७०० वर्षों के मध्य काल का था। क़िले की दीवारें इसके चारों ओर थीं। अनुमान लगाया गया कि यह सिंधु घाटियों की सभ्यता के काल का था। इसी काल से जुड़े कुछ क़िले खुदाई करने पर दिखायी पड़े

रचयिता : मीरा उग्रा
चित्र : गौतम सेन

गुजरात, राजस्थान और हरियाना में। क़िलों का निर्माण साधारणतया होता है, शत्रुओं से बचने और उनके आक्रमणों का सामना करने। इनका एक सदुपयोग भी है। नदियाँ सभ्यता को जीवित रखने और उसको पनपाने में बहुत ही प्रधान पात्र अदा करती हैं। जब ये नदियाँ उमड़कर बाढ बनकर प्रवाहित होती हैं तब वहाँ के नागरिक क़िलों में आश्रय लेते हैं। यों ये क़िले उनकी रक्षा के शिबिर बनते हैं। मुख्य क़िले इसी उद्देश्य से ऊँचे प्रदेशों पर निर्मित हुए हैं। ऋग्वेद में क़िलों को दुर्ग और पुर कहा गया है। इंद्र का एक और भी नाम है - पुरंदर- याने क़िलों पर विजय पानेवाला। यजुर्वेद के धनुर्वेद में दुर्ग-निर्माण संबंधी विषय विस्तृत रूप से वर्णित हैं। धनुर्वेद में छह प्रकार के क़िलों

सिंधु - घाटियों के सभ्यताकाल का कालीबंगा

के विवरण हैं। ये हैं-पर्वत पर निर्मित 'गिरिदुर्ग', जल के अंदर निर्मित 'जलदुर्ग', अरण्य में निर्मित 'वनदुर्ग', भूमि पर निर्मित 'महि दुर्ग', रेगिस्तान में निर्मित 'धन्वा दुर्ग', वृक्षों के बीच निर्मित 'वृक्ष दुर्ग'। इन छहों

पुरंदर इंद्र

जलदुर्ग

प्रकार के दुर्गों में 'गिरिदुर्ग' अति श्रेष्ठ माना गया है। दुर्ग के बिना जो राजा होता है, उसकी तुलना विषहीन सर्प से की गयी है।

अयोध्या तथा लंका नगरों में स्थित क़िलों का वर्णन 'रामायण' में है। अयोध्या के क़िले के चारों ओर असाधारण खाई है। ऊँचे-ऊँचे बुर्जों से इसका निर्माण हुआ है। लंका का क़िला आकाश को छूनेवाले प्राकारों, दुर्गम अरण्यों, नदियों और खाइयों से घिरा हुआ है। इसका वर्णन करते हुए कहा गया है कि इसपर वश पाना देवताओं के लिए भी संभव नहीं है। 'महाभारत' में हस्तिनापुर, इंद्रप्रस्थ, मधुस, राजगृह, अहिच्छित्र

सेतु निर्माण

और द्वारका नगर के दुर्गों का विशद वर्णन है। इनका रसीला वर्णन पढ़ते हुए लगता है मानों वे हमारी आंखों के सामने हों।

इंद्रप्रस्थ दुर्ग के बुर्ज गोपुरों की तरह होते थे। नगर भर के रक्षा-संबंधी प्रबंधों का पर्यवेक्षण यहीं से होता था। दुर्ग का प्रधान द्वार ही नहीं होता था बल्कि गरुड द्वार के नाम से

रहस्य-मार्ग भी हुआ करते थे।

इलाहाबाद के समीप खुदाइयाँ हुई। फलस्वरूप वहाँ कौशांबी घर के खंडहर मिले। कहते हैं, परीक्षित के पोते के पुत्र निचाक्ष ने इसका निर्माण किया।

बुद्ध के काल में चंपा, राजगृह, साकेत, वाराणसी दुर्ग युक्त मुख्य नगर थे। पश्चिमी और उत्तरी दिशाओं के भागों पर तक्षशिला, पुष्कलावति, तथा गांधार बड़े ही प्रबल साम्राज्य थे। सिकंदर ने जब इनपर चढ़ाई की तब इन साम्राज्यों ने उसका डटकर मुकाबला किया। पुष्कलावति दुर्ग को अपने वश करने में सिकंदर को एक महीने से अधिक समय लगा।

उस युद्ध में पुरुषोत्तम ने सिकंदर के छक्के छुड़ा दिये। रण-रंग में हाथियों ने अपने करतब दिखाकर

उसकी सेना को तितर-बितर कर दिया। भारतीय वीरों ने अपना शौर्य व साहस दिखाकर उसकी सेना को भयभीत कर दिया। मगध के शासक धननंद की वीरता की कथाएँ सुनकर ग्रीक सेनाएँ भय से काँप उठीं। इनके बाद जब चंद्रगुप्त मौर्य मगध का शासक था, तब

पाटलीपुत्र के दुर्ग-द्वार

ग्रीक पर्यटक मेगस्थनीज़ भारत आया था। उसने मगध की राजधानी पाटलीपुत्र में निर्मित अद्भुत दुर्ग का विपुल वर्णन अपने ग्रंथ में किया था। दुर्ग की चहारदीवारी ४० कि.मीटर से भी अधिक लंबी थी। चहार दीवारी के चारों तरफ़ ३-५ गहरी और १८० मीटर विस्तृत खाई थी। खाई के पानी में मगर तैरते रहते थे। किले में ६४ द्वार तथा ५७० बुर्ज़ थे।

हमारे देश ने दुर्गों के निर्माण में ई.पू. ३०० साल पहले ही परिपूर्णता प्राप्त की थी।

(यहाँ प्रकाशित चित्र, उन-उन दुर्गों के वर्णन के आधार पर चित्रकार के चित्रित चित्र हैं। अंतिम चित्र सांचीस्तूप कुड्य शिल्प का रेखाचित्र)

एक क़िला, जो कब्ज़े में है।

सोने की मोरनी

कनकपुर में अफ़वाह फैली कि विंध्यारण्य प्रदेश में सोने की एक मोरनी घूम रही है। कनकपुरी के महाराज विचित्रसेन को विलक्षण तथा अद्भुत वस्तुओं तथा प्राणियों के संग्रह की आदत थी। इसलिए यह समाचार पाते ही कुछ सैनिकों को लेकर विंध्यारण्य की ओर निकल पड़ा।

विंध्यारण्य के पर्वत की तलहटी में वनजनों की एक बस्ती थी। उस बस्ती के प्रधान ने राजा का सादर स्वागत किया और उसकी आवभगत की। राजा ने प्रधान से बताया कि इन प्राँतों में सोने की जो मोरनी घूमती दिखायी दे रही है, उसे पकड़ने आया हूँ।

सोने की मोरनी की बात सुनते ही प्रधान ने बहुत ही दुखी हो कहा "प्रभु, सोने की वह मोरनी इधर कुछ दिनों से दिखायी नहीं दे रही है। एक महीने के पहले मेरी बेटी ने उसे पकड़कर आपको भेंट में देना चाहा। इसके लिए वह जंगल में भी गयी। रात हो गयी, फिर भी वह नहीं लौटी। उसको खोजते हुए हम लोग जंगल के अंदर गये। वहाँ हमें एक जगह पर मोरनी का एक पंख मिला" कहते हुए उसने बग़ल में ही खडे एक वन युवक की ओर देखा।

वह युवक झोंपड़ी के एक कमरे में गया और सोने का एक पंख ले आया, जिसपर कपड़ा ढका हुआ था। उसने उसे राजा के सामने रखा।

विचित्रसेन ने उस पंख को बखूबी देखा और कहा "अद्भुत, यह मोरनी अवश्य ही देवलोक से उतरी होगी। जो भी हो, इसकी वजह से तुम्हारी बेटी दिखायी नहीं दे रही है। सुवर्ण मोरनी के साथ-साथ तुम्हारी पुत्री को भी ढूँढ़ने का प्रयत्न करूँगा"। कहकर वह जंगल की ओर निकल पड़ा।

जंगल में सोने की मोरनी के लिए उसने बहुत ढूँढ़ा। सूर्यास्त के एक घंटे के पहले एक सिपाही दौड़ा-दौड़ा आया और कहा कि मोरनी

उषा गुप्ता

की एक गुंजा झुरमटों के पीछे मिली। तब मैने देखा कि उस समय फन फैलाकर फुफकारते हुए डसने के लिए तैयार सर्प से मोरनी लड़ रही थी। सर्प को वह अपने पैरों से कुचल रही थी और बीच-बीच में अपनी नाक से उसे घायल करने की कोशिश कर रही थी।

घोड़ों पर बैठे हुए राजा और उसके सिपाहियों ने वलयाकार में मोरनी को पकड़ने के लिए उसे घेर लिया। सुवर्ण मोरनी ने यह देख लिया और तक्षण ही हवा में उड़कर झाड़ियों के पीछे जा छिपी। फिर झाड़ियों के पीछे से दौड़ने लगी।

राजा ने उसका पीछा किया। सिपाही पीछे ही रह गये, क्योंकि उतने वेग से वे अपने घोड़ों को दौड़ा नहीं पाये। लग रहा था कि किसी भी क्षण राजा मोरनी को पकड़ पायेगा। दौड़ती-दौड़ती मोरनी एक सरोवर के किनारे पर स्थित एक झोंपडी में जा घुसी।

उस झोंपड़ी में बूढ़ी दादी ने उस मोरनी को अपने हाथों में लिया और उससे पूछा "फ़िर से क्या आपदा आ पड़ी"? कहती हुई उसके सोने के पंखों को पड़े प्यार से सँवारने लगी।

राजा विचित्रसेन झोंपड़ी के सामने घोड़े से उतरा और अंदर गया। तब तक अंधेरा छा चुका था। उस घने अंधकार में भी मोरनी के पंख मणिदीपों की तरह प्रकाशमान थे, ज्योति झोंपड़ी भर व्याप्त हो रही थी। झोंपड़ी के अंदर कांति ही कांति थी। लग रहा था, रात नहीं, दिन है।

दादी के हाथों में बैठी मोरनी को आश्चर्य से देखते हुए राजा ने कहा "दादी, इस सुवर्ण मोरनी को पकड़ने के प्रयत्न में ही मैं यहाँ आया हूँ। अच्छा हुआ, यह तुम्हें मिल गयी। यह मोरनी मुझे दे दो। पुरस्कार के रूप में हीरों का यह हार लो।" कहते हुए वह गले का हार निकालने लगा।

दादी ने महाराज को ग़ौर से देखा और कहा "तुम यह क्या कह रहे हो? यह तो मेरी पालतू मोरनी है। अगर ज़िद ही करते हो तो इसका एक पंख दूँगी। इसे ले जाओ।"

राजा नाराज़ होता हुआ बोला "मैं इस देश का शासक हूँ। इस अरण्य के जितने भी पेड-पौधे, पक्षी, जंतु जो भी हैं, सब मेरे हैं और उन्हें

मेरे ही अधीन समझो। तब यह सोने की मोरनी भी मेरी ही हुई ना?'' कहकर वह मोरनी को ज़बरदस्ती छीनने लगा।

उस समय राजा हठात् नीचे गिर गया, मानों बिजली छू गयी हो। थोड़ी देर बाद उठते हुए राजा से दादी ने कहा ''देखो बेटे, यह कोई साधारण मोरनी नहीं है। इसमें देवांश है। मेरी अनुमति के बिना इसे कोई भी नहीं ले जा सकता। तुम पर मुझे दया आती है। एक काम करो। यह वीणा लो और इसे झंकृत करते हुए मेघमल्हार राग में एक मधुर गीत गाओ। तब जाकर कम से कम इस मोरनी का एक अंश दूँगी।'' कहती हुई कोने में पड़ी वीणा उसे दी।

राजा पद्मासन लगाकर बैठ गया और मेघमल्हार राग में बहुत ही मधुर स्वर में गाने लगा। मोरनी खूब नाची और सोने का एक अंडा दिया। उस अंडे को दादी ने राजा के हाथ में रखा और कहा ''पुत्र, सप्ताह भर में यह अंडा फूटेगा और इसमें से सोने की एक मोरनी जन्मेगी। लेकिन याद रखना, तब तक सूर्य की किरणें इसका स्पर्श ना करें। एक और बात का भी ख्याल रखना। इस अंडे के बारे में किसी को कुछ भी मालूम नहीं होना चाहिये। किसी को अगर मालूम हो जाए इसकी महिमा लुप्त हो जायेगी''। उसने यों कहकर उसे सावधान किया।

राजा ने बड़े आनंद से उस सोने के अंडे को स्वीकार किया और अपने सिपाहियों सहित क़िले में पहुँचा। उसने उस अंडे को चंदन की एक संदूकची में रखी और उसे महल के एक विशिष्ट कक्ष में सुरक्षित रखी।

छह दिन बीत गये। सातवें दिन संध्या को बारह वर्ष की राजा की पुत्री राजकुमारी दीप्तिरेखा अपनी सहेलियों के साथ आँख-मिचौली का खेल खेलती-खेलती उस कक्ष में आयी, जहाँ सोने का अंडा सुरक्षित रखा हुआ था। चंदन की उस संदूकची को देखते ही उसे खोलकर देखने की उसकी तीव्र इच्छा हुई। उसने संदूकची खोली।

सोने के रंग में झिलमिलाते हुए उस अंडे को देखकर राजकुमारी चकित रह गयी। अपनी सहेलियों को दिखाने के लिए वह उसे लेकर उद्यान-वन में गयी। सायंकाल के सूर्य की किरणें

उस अंडे पर पडीं, जिससे बड़ी ध्वनि के साथ वह अंडा फूट गया। उसमें से सोने के रंग में झिलमिलाता हुआ एक छोटा-सा साँप बाहर आया और उसने राजकुमारी के बायें पैर को डस लिया।

दूसरे ही क्षण राजकुमारी सुवर्ण मोरनी में परिवर्तित हो गयी और उड़ती-उड़ती क़िले के बाहर चली गयी। राजकुमारी की सहेलियाँ ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाने लगीं और जाकर राजा विचित्रसेन को यह समाचार सुनाया। उसने तुरंत घोड़े पर बैठकर उस मोरनी का पीछा किया, परंतु वह उसके हाथ नहीं आयी और उड़ती हुई जंगल में चली गयी। आख़िर उसने दादी की झोंपड़ी में प्रवेश किया।

दुखी राजा झोंपड़ी में आया। वहाँ अब उसने सोने की तीन मोरनियों को देखा। वे तीनों बिलकुल एक समान थीं। तीनों में रत्ती भर का भी भेद दिखायी नहीं पड़ रहा था।

महाराज को देखकर दादी ने कहा. ''क्यों पुत्र, फिर से क्यों आये हो? मैने जो अंडा दिया, क्या वह नहीं फूटा? क्या एक और अंडा चाहिये?'' उसने बात ऐसी की, मानों वह कुछ नहीं जानती। राजा एकदम क्रोधित हो बोला ''ऐ बुड्ढी, अनजानी बनकर नाटक करोगी तो मैं तुम्हारे टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा। ख़बरदार। मेरी इकलौती पुत्री, सोने की मोरनी बनकर यहाँ आयी है। चुपचाप मेरी बेटी को पूर्व रूप दे दे और मेरे हवाले कर दे। नहीं तो मैं तुझे मार डालूँगा''। म्यान से तलवार निकालते हुए राजा ने धमकी दी।

दादी अपना पोपला मुँह खोलकर विकट अट्टहास करती हुई बोली ''जानती हूँ, तुम महान वीर हो। पहले अपनी तलवार म्यान में रख। इन तीनों मोरनियों में से कौन-सी मोरनी तुम्हारी पुत्री है, यह बता सको तो तुम्हारी पुत्री अपने निजी रूप में आप ही आप प्रकट हो जायेगी। नहीं तो तुम भी शाश्वत रूप से सुवर्ण मोर बन जाओगे''।

राजा विचित्रसेन ने अपनी तलवार म्यान में रख दी और ध्यान से उन मोरनियों को देखने लगा। उनमें से एक मोरनी अपना सिर उठाकर उसी की तरफ़ देख रही थी। उसने देखा कि

उसकी आँखों में आँसू हैं। एक और मोरनी दीन हो सिर झुकाकर बैठी रही। उसकी आँखों में भी आँसू थे।

थोड़ी देर तक राजा सोचता रहा और फिर दादी से कहा "सिर उठाकर धैर्यपूर्वक देखनेवाली यह मोरनी मेरी पुत्री दीप्तिरेखा है। सिर झुकाकर बैठी दीनता से भूमि को देखनेवाली यह मोरनी वन प्रधान की पुत्री मोहिनी है"।

राजा की परख की प्रशंसा करती हुई दादी ने कहा "पुत्र, तुमने अपनी पुत्री को ठीक पहचान लिया। इस सोने की मोरनी को अभी तुम्हारी पुत्री के रूप में बदल डालूँगी"। मंत्र जपती हुई वह उस मोरनी की ओर बढ़ने लगी।

तब राजा चिल्लाता हुआ बोला "दादी, रुक जा। मेरी बेटी को ही नहीं, वनजन के प्रधान की बेटी मोहिनी को भी उसके असली रूप में बदल डालो।"

राजा की तरफ़ आश्चर्य से देखती हुई दादी बोली" उस वनजन के प्रधान की बेटी के लिए अनावश्यक तुम क्यों परेशान हो रहे हो?"

विचित्रसेन ने कहा "वह प्रधान मेरे राज्य का नागरिक है। अपनी बेटी से भी अधिक उसकी बेटी की रक्षा करना राजधर्म है। अगर तुम्हें ऐसा करने में कोई आपत्ति हो तो मुझे भी सुवर्ण मोर बना दो।"

दादी ने तुरंत उसके कंधे पर हाथ डालते हुए कहा "राजन्, तुम्हारी धर्म-बुद्धि, न्याय-बुद्धि तथा दया-गुण से मैं बहुत प्रसन्न हूँ। याद रखना कि मैं भी तुम्हारे नागरिकों में से एक हूँ। मेरी तुमसे एक विनती है। ये प्राणी अरण्य में किसी को भी हानि पहुँचाये बिना स्वच्छंदता से घूमते रहते हैं। चाहे वे कितने ही मनोहर और आकर्षक लग रहे हों, उन्हें पकड़कर बाँधना और उन्हें मारना क्रूर कार्य हैं, अत्याचार की पराकाष्ठा है। तुम यह अन्याय रोक दो"। कहकर वह उन मोरनियों के पास आयी और उन्हें उनके असली रूपों में बदल दिया।

विचित्रसेन ने दादी को धन्यवाद दिया और अपनी कृतज्ञता व्यक्त की। वनजन के प्रधान को उसकी पुत्री सौंपी और बेटी दीप्तिरेखा को लेकर राजधानी लौटा।

कला का सम्मान

नींद से उठते ही मुगलसराय के ज़मींदार की प्रशंसा में भाट गीत सुनाया करते थे। सुनते-सुनते उसके कान पक गये। उसने अपने दीवान को बुलाया और कहा "ये भाट निकम्मे हैं। ये भाट नहीं लगते बल्कि जादूगर और मसख़रे लग रहे हैं। ये बिल्कुल ही सुस्त हैं। सुस्त होने के कारण कुछ भी काम नहीं करते। इनकी वजह से सुस्त लोगों की संख्या भी बढ़ती जा रही है। आगे से इनपर कुछ भी खर्च नहीं किया जाए। इन्हें मासिक और वार्षिक वेतन जो दिये जा रहे हैं, बंद कर दिये जाएँ। उन्हें स्पष्ट बता दीजिये कि अपनी सुस्ती को त्यजें और कोई ठोस काम करके अपनी जीविका चलायें। उन्हें बता दीजिये कि यह मेरा आदेश है।"

दीवान मुस्कुराया और बोला "प्रभू, आप मेरी बात सुनना चाहें या ना सुनना चाहें, यह आपकी इच्छा पर निर्भर है। किन्तु मैने आपका नमक खाया है। इसलिए मेरी बातों पर आप ज़रा ध्यान दीजिये। विनोद जीवन का अभिन्न अंग है। जब हमें वे पसंद नहीं आते, तब उन्हें सुस्त ठहराकर उन्हें निकाल देना अच्छी पद्धति नहीं है। देश के सौभाग्य के लिए मानव का परिश्रम करना जितना आवश्यक है, उतनी ही आवश्यक है इन कलाकारों की कला, जो हृदय को उल्लास और आनंद पहुँचाती है। आप पुनः सोचिये कि इनको दिये जानेवाले मासिक और वार्षिक वेतन दिये जाएँ या नहीं"।

ज़मींदार चिढ़ता हुआ दीवान की तरफ़ देखता रहा और कहा "देश वीरों की धरोहर है। इसलिए देश की रक्षा के लिए और उसकी प्रगति के लिए वीरों को प्रोत्साहन देना हमारा धर्म है। कहा गया है कि 'कष्टे फले'। कष्ट उठाने पर ही फल मिलता है, धन कमाया जा सकता है।

वीर अपने देश की रक्षा के लिए बहुत ही कष्ट उठाते हैं। उनकी सहायता कीजिये और देश की आर्थिक स्थिति को सुधारिये। मैं नहीं

चाहता कि अपना पेट भरने के लिए विनोद पहुँचानेवाले इन सुस्त लोगों को बढ़ावा दिया जाए। ऐसे इन लोगों के लिए जो गीत और कीर्तन रचते है, उन्हें भी मैं पसंद नहीं करता। मेरे शासन में ऐसे लोगों के लिए कोई स्थान नहीं। यही मेरा अंतिम निर्णय हैं"।

दीवान और कुछ बोल ना सका। लोगों को मालूम भी हो गया कि ज़मींदार की दृष्टि में कलाकार सुस्त हैं। अब लोग भी उन्हें सुस्त ही मानने लगे। इस वजह से मुगलसराय के ज़मींदार के यहाँ नाच-गाने रुके गये। उनके लिए जो कविताएँ रची गयीं, उनका भी उपयोग नहीं हो रहा है। शिल्प और चित्रलेखन की कलाएँ भी नाम मात्र के लिए रह गयीं। गाँव-गाँव घूमकर जो नाटक खेलते थे, वे भी रचनाओं के अभाव में प्रजा का मनोरंजन करने में असफल हुए।

ऐसे समय पर ज़मींदार की पत्नी रोग-ग्रस्त हुई। उसके जीने की भी उम्मीद नहीं रही। आस्थान-वैद्य ने ज़मींदार से बताया "प्रभू, मैने ज़मींदारिनी की यथाशक्ति चिकित्सा की। अब उनमें रोग के कोई लक्षण नहीं हैं। अब आपको चाहिये कि हर क्षण आप उनकी देखभाल करते रहें। मेरी सलाह है कि आप उनके मनोरंजन का प्रबंध करें। इससे उनके स्वास्थ्य में सुधार होगा। वे आनंद और उल्लास से सदा भरी रहें तो रोग कभी भी पास नहीं पटकेगा। कहा भी गया है कि आनंद आधा बल होता है। मन स्वस्थ हो तो शरीर भी स्वस्थ होगा। वे पुनः पूर्व स्थिति में होंगीं।"

उसकी बातें सुनकर ज़मींदार सोच में पड़ गया। अब दीवान भी वहीं था। उसने इस अवसर का लाभ उठाकर ज़मींदार को समझाना चाहा।

उसने कहा "प्रभू, कार्य-भार से थक जाएँ या मन अशांत हो तो हमारे पूर्वज ललित कलाओं में अपना थोड़ा-बहुत समय बिताते थे। आप अपने लिए ना चाहें तो ना सही, परंतु कम से कम ज़मींदारिनी के मनोरंजन के लिए कोई आवश्यक प्रबंध कीजिये। मुझे इसकी अनुमति दीजिये।"

थोड़े ही दिनों में दरबार कलाकारों से शोभायमान हो गया। दो-तीन दिनों तक

ज़मींदार का मन उचटा रहा, पर धीरे-धीरे उसे लगा कि विनोद-कार्यक्रम देखे या सुने बिना उससे रहा नहीं जायेगा। उसे लगने लगा कि जीवन में विनोद का भी प्रमुख स्थान है।

इस प्रबंध के तीसरे ही दिन ज़मींदार का मन उल्लास से भरा हुआ था। वहाँ दो भाट आये। ज़मींदार उन्हें देखकर चिढ़ गया, उसकी भौहें तन गयीं। फिर भी उन्होंने ज़मींदार की प्रशंसा के पुल बांधे और उसे आकाश में पहुंचा दिया। आख़िर एक ने दूसरे से कहा "पिता और पुत्र ने एक स्त्री को एक-एक शिशु दिया। उन दोनों शिशुओं के बीच लड़ाई पैदा की भगवान ने। एक को मार डाला और दूसरे को सम्राट बनाया। ज़मींदार से कहो कि गाय के दूध से उस भगवान का वे अभिषेक करें।"

दूसरे ने पूछा "किस गाय की बात कर रहे हो?" यह सुनकर ज़मींदार आपे से बाहर हो गया। चिल्लाता हुआ बोला "छी, अनाप-शनाप बकनेवाले इन दोनों को यहाँ से तुरंत निकालो। जो मुंह में आया, बक देते हैं।"

तब दीवान ने ज़मींदार से नम्रतापूर्वक कहा "यह कोई बकवास नहीं है प्रभू। वे कह रहे हैं कि आप श्रीकृष्ण का अभिषेक क्षीर से करें। सूर्य और यम पिता और पुत्र होते हैं। कर्ण और धर्मराज को वरपुत्रों के रूप में उन दोनों ने कुन्ती देवी को प्रदान किया।

कुरुक्षेत्र के युद्ध में श्रीकृष्ण ने धर्मराज का साथ दिया और कर्ण को मरवा डाला। इनका कथन है कि ऐसे कृष्ण का अभिषेक क्षीर से किया जाए।"

यह विवरण जानकर ज़मींदार बहुत ही संतुष्ट हुआ। उसने कहा "आपकी बातें चमत्कार से भरी हुई हैं। इन बातों में गूढ़ार्थ भी है। यह पहेली जैसी है। इस पहेली को सुलझाने पर विवरण मालूम होता है। इससे हृदय को बहुत ही आनंद पहुंचता है।"

उन्होंने उन भाटों का ही नहीं बल्कि अन्य कलाकारों का भी सम्मान किया, उनको पुरस्कृत किया।

इस घटना के बाद मुगलसराय की ज़मींदारी में कलाओं को पुन, प्रोत्साहन मिलने लगा।

कृपाचार्य ने कर्ण से कहा कि अर्जुन से द्वंद्व युद्ध करना हो तो तुम्हारा भी राजा होना आवश्यक है। कर्ण अपने माता-पिता का नाम बताने से संकोच कर रहा था। दुर्योधन यह सब कुछ बड़े ध्यान से देख रहा था और सुन रहा था। उसने आगे बढ़कर कृपाचार्य से यों कहा "शास्त्र कहते हैं कि क्षत्रिय वंश में जिनका जन्म हुआ हो, जिनके पास भारी सेना हो, उन्हें राजा कहा और माना जा सकता है। फिर भी अर्जुन से द्वंद्व युद्ध करने की योग्यता व क्षमता के अभाव का कारण अगर कर्ण का राजा ना होना हो तो घोषणा करता हूँ कि कर्ण इसी क्षण से अंगदेश का राजा है।"

दुर्योधन के आज्ञानुसार पुरोहित बुलाये गये। सोने का सिंहासन मंगाया गया। सुवर्ण कलशों में पानी लाया गया। पुष्प व अक्षत मंगाये गये। दुर्योधन ने कर्ण को सिंहासन पर आसीन किया और उसका अभिषेक किया।

इस कर्मकांड की समाप्ति के बाद कर्ण ने दुर्योधन से कहा "महाराज, आपने मुझे राजा बनाया है। बताइये कि मैं किस प्रकार आपका ऋण चुकाऊँ?" दुर्योधन ने कहा "तुम जैसे पराक्रमी की मैत्री मुझे चाहिये"।

कर्ण का पालन-पोषण किया सूत ने। रथ में बैठा हुआ वह, नीचे उतरा और अंगराज कर्ण का अभिनंदन किया। कर्ण ने पुत्र-भाव से सूत को प्रणाम किया। सूत ने बड़े प्रेम से कर्ण को उठाया और उसे अपने आलिंगन में लिया। दोनों की आँखों में आनंद से भरे आँसू थे।

अब यह प्रकट हो गया कि कर्ण सूत का पुत्र है। तब भीम ने कर्ण से कहा "सूतपुत्र, रथ चलाना तुम्हारा पेशा है। अच्छा तो यही होगा कि अपने पेशे में ही लगे रहो। क्यों अर्जुन से द्वंद्व

सहज कवच कुंडलों के साथ इसका जन्म हुआ है। यह असाधारण मनुष्य है। यह केवल अंगराज्य पर ही नहीं बल्कि संपूर्ण विश्व पर शासन चलाने की क्षमता रखता है। यह महान पराक्रमी है। इसकी शूरता-वीरता में किसी को नाम मात्र का भी संदेह होना नहीं चाहिये। मैने इसे अंग देश का राजा बनाया, इसपर किसी को आपत्ति हो तो उसे मुझसे द्वंद्व युद्ध करने के लिए आह्वानित कर रहा हूँ। जीत-हार का निर्णय हो जायेगा''।

किन्तु द्वंद्व युद्ध के प्रारंभ होने के पहले ही सूर्यास्त हो गया। कुछ लोगों ने अर्जुन की प्रशंसा की तो कुछ लोगों ने दुर्योधन की। कुछ और लोगों ने कर्ण की भी भरपूर प्रशंसा की। और यों वे अपने-अपने घर लौट पड़े। किन्तु आज का दिन दुर्योधन के लिए पर्वदिन था। आज तक अर्जुन उसके लिए काँटा बना हुआ था। वह उससे डरता भी था। लेकिन आज कर्ण को मित्र बनाकर वह निर्भीक हो गया। उसे लगा कि कर्ण अर्जुन का सही प्रतिद्वंद्वी है। अब वह कलेजे पर हाथ रखकर सुख की नींद सो सकता है।

समय बीतता गया। एक दिन प्रातःकाल द्रोण ने अपने सब शिष्यों को बुलाया और उनसे कहा ''मुझे गुरु-दक्षिणा दीजिये''। सबने उन्हें प्रणाम किया और पूछा कि कहिये, आपको हम क्या दें?

''सत्ता के मद में झूमता हुआ मदोन्मन्त अविवेकी है द्रुपद। उसे पकड़कर लाना होगा'' द्रोण ने मांग की।

युद्ध करने की इच्छा रखते हो, डींग हाँकते हों। क्या ऐसा प्रलाप तुम्हें शोभा देता है? बताओ तो सहीं, अंग देश का राजा बनकर तुम करोगे भी क्या?''

कर्ण भीम की व्यंग्य भरी बातों से बहुत ही नाराज़ हुआ। पर, वह कुछ नहीं कह पाया। क्रोध से गरम साँस खींचते हुए सूर्य को देखता मौन रह गया।

भाइयों समेत बैठे दुर्योधन ने कहा ''भीमसेन, तुम्हारी बातें अनुचित हैं। राजा को किसी भी बलशाली से लड़ने सदा सन्नद्ध रहना चाहिये। अर्जुन का भी यही धर्म है। शूर-जन्म और नदी-जन्म के संबंध में कोई कुछ बता नहीं सकता। इस कर्ण में दिव्य लक्षण हैं।

गुरु की आज्ञा का पालन करने के लिए सब कुमार तैयार हो गये। रथों को सजाया, कवच पहने, खड्ग व धनुष बाण लिये यात्रा के लिए सन्नद्ध हो गये। द्रुपद से युद्ध करने की पूरी तैयारियाँ कीं, और गुरु के साथ चल पड़े।

वे जब पांचालपुर के निकट पहुँचे, तब अर्जुन ने द्रोण से कहा "इनमें से कोई भी द्रुपद को ले आ नहीं पायेगा। जब तक वे विफल होकर नहीं लौटते, तब तक हम पाँडव यहीं प्रतीक्षा करेंगे। तब हम द्रुपद को बंदी बनाकर लायेंगे।"

दुर्योधन अपने भाइयों और कर्ण के साथ राजधानी पहुँचा। द्रुपद को मालूम हो गया कि उसे बंदी बनाने, डींग हाँकते हुए, अपनी वीरता की लंबी-लंबी गाथायें सुनाते हुए कौरव आगे बढ़ रहे हैं। अपनी सेना और अपने भाइयों को लेकर उनसे युद्ध करने निकल पड़ा। कुछ समय तक कौरव उनसे लड़ते रहे, किन्तु द्रुपद और उसकी सेना के ज़बरदस्त मुक़ाबले के सामने लडखड़ा गये। अपनी जान बचाने वे वहाँ से भाग गये और पाँडवों के पास पहुँचे।

अर्जुन ने द्रोण को प्रणाम किया और धर्मराज से अनुमति ली। भीम को अपनी सेना का सरदार बनाया और नकुल सहदेव को अपने रथ की रक्षा का भार सौंपा। द्रुपद को बंदी बनाकर लाने का वचन देकर वह निकल पड़ा।

भीम और अर्जुन द्रुपद की सेना पर हावी हो गये और उन्हें तितर-बितर कर दिया। द्रुपद की सेना ने अपना मनोधैर्य खो दिया। वे अपनी रक्षा का मार्ग ढूँढने लग गये। अर्जुन अपना युद्ध-कौशल दिखाता हुआ अपने रथ को लेकर द्रुपद

के पास पहुँचा। रोष से भरे द्रुपद ने अर्जुन पर हमला बोल दिया और बड़ी ही चुस्ती के साथ उससे लड़ने लगा। युद्ध के बीचों-बीच एक बार द्रुपद दिखायी नहीं पड़ा तो उसकी सेना में हाहाकार मच गया। अर्जुन को घमासान लड़ाई लड़नी पड़ी। उसने द्रुपद के रथ और अस्त्रों का ध्वंस किया। उसे आख़िर पकड़ ही लिया।

भीम, नकुल, सहदेव द्रुपद की सेनाओं का नाश करते जा रहे थे। भाइयों के पराक्रम के सामने टिक ना सकने के कारण वे दुम दबाकर भागने लगे। तब अर्जुन ने चिल्लाकर अपने भाइयों से कहा ''द्रुपद को बंदी बना लिया है। जिस काम पर हम आये, वह पूरा हो चुका है। ये हमारे बंधु हैं। अनावश्यक द्रुपद की सेना का संहार मत करो''।

अर्जुन ने द्रुपद को बाँध दिया और अपने गुरु के सामने ले आया। गुरु-दक्षिणा के रूप में उसे समर्पित किया। तब द्रोण ने द्रुपद से कहा ''पाँचालराजा, तुम्हारा कांपिल्य नगर अब हमारे हाथ आया है। अब ही सही, क्या मानते हो कि मैं तुम्हारा बाल्य-मित्र हूँ। डरो मत। मैं ब्राह्मण हूँ। मैं शांत स्वभाव का हूँ। मैंने अपनी मैत्री भुलायी नहीं। अपनी मैत्री निभाने के लिए ही मैंने तुम्हें यहाँ लाने को कहा है। मैं शासकों की मैत्री का बहुत ही इच्छुक हूँ। पर, अब तुम शासक नहीं हो। तुम्हारा देश तुमसे अब छिन गया है। अपनी मैत्री को निभाने के लिए तुम्हें आधा राज्य दे रहा हूँ। स्वीकार करो। गंगा के दक्षिणी दिशा का राज्य तुम्हारा है, उत्तरी ओर का राज्य मेरा है। अब हम दोनों बिना किसी शत्रुता के शासन-भार संभालेंगे।''

द्रुपद ने द्रोण की शाश्वत मैत्री के प्रस्ताव को स्वीकार किया। द्रोण ने उसे छोड़ दिया और उसे सादर भेज दिया।

तब से द्रुपद दक्षिणी पाँचाल का राजा ही बना रहा। माकंदी और कांपिल्य उसकी राजधानियाँ थीं। द्रुपद समझ गया कि सेना-बल के आधार पर द्रोण को जीतना असाध्य है। अलावा इसके, अब तक उसकी कोई संतान नहीं हुई। इन दोनों कारणों से वह देश भर भ्रमण करता रहा। बड़े-बड़े तपस्वियों के आश्रय में रहा।

द्रोण उत्तरी पांचाल का शासक बना रहा।

अहिछत्र उसकी राजधानी थी।

एक साल गुज़र गया। धृतराष्ट्र ने धर्मराज को युवराज बनाने का संकल्प किया। धर्मराज साहसी, सहनशील और सीधे स्वभाव का था। अपने अधीन काम करनेवालों का वह आदर करता था। युवराज बनकर धर्मराज ने शासन को सुचारू रूप से चलाया। अपने को समर्थ प्रमाणित किया। लोग तो यहाँ तक कहने लगे कि शासन-भार संभालने में वह अपने पिता से भी अधिक दक्ष व समर्थ है।

भीम बलराम का शिष्य था। गदा तथा खड्ग-युद्ध में उसने नैपुण्य पाया। अर्जुन जब धनुष हाथ में लेता था, तो हाथ में चोट लगने पर भी धनुष छोड़ता नहीं था। उसने इस दिशा में पर्याप्त अभ्यास भी किया। वह बड़े वेग से बाण छोड़ता था। उसका निशाना अचूक था। उसके इस कला-प्रावीण्य पर द्रोण बहुत ही संतुष्ट था। सब प्रकार के आयुधों के प्रयोग में वह श्रेष्ठ रहा।

"चाहे कोई भी बड़ा तुमसे युद्ध करने आये तो अवश्य ही उनसे युद्ध करो। उनके प्रति जो श्रद्धा व भक्ति तुममें है, उनके वश में आकर युद्ध करना मत छोड़ो। युद्ध करना तुम्हारा धर्म है" यों द्रोण अर्जुन को सलाहें दिया करता था।

अर्जुन द्रोण के प्रेम का पात्र बना रहा। सौवीर राजा विमल, दत्तामित्र तथा उसका भाई कौरवों के शत्रु थे। उसका पिता भी उनका कुछ नहीं कर पाया। अर्जुन ने उन तीनों को मार डाला। अकेले ही वह रथ में गया और पूर्वी

राजाओं तथा उनके दस हज़ार सैनिकों को मार ड़ाला। अलावा इसके, अड़ोस-पड़ोस के कितने ही राजाओं को उसने हराया और उन्हें कौरव राज्य का सामंत बनाया। उनसे कर व भेंट के रूप में अनगिनत संपत्ति वसूल की और हस्तिनापुल ले आया।

नकुल, सहदेव ने भी कौरव राज्य के कितने ही शत्रुओं को मौत के घाट उतारा। असीम धन-राशि लाकर खज़ाने को भरते रहे।

पाँडवों की ख्याति दशों दिशाओं में व्याप्त होने लगी। उनकी प्रसिद्धि से धृतराष्ट्र में उनके प्रति ईर्ष्या पैदा हो गयी। उससे यह सहा नहीं गया। वह निर्णय नहीं कर पाया कि उन्हें ऐसे ही बढ़ते रहते देखते रहना चाहिये या उन्हें दबा देना चाहिये। चुप रहना चाहिये या उनकी प्रगति में बाँध बाँध देना चाहिये। उसने कणिक नामक एक बूढ़े ब्राह्मण मंत्री से सलाह मांगी। कणिक ने सलाह दी कि शत्रु का नाश, धोखे से ही सही, किया जा सकता है।

धृतराष्ट्र की तरह दुर्योधन भी ईर्ष्या से जला जा रहा था। वह सदा पाँडवों के नाश के उपाय ही सोचते रहने लगा। अपने मित्र कर्ण, शकुनि, दु:शासन आदि को बुलाता और उनसे सलाहें लेता रहता था कि पांडवों का नाश कैसे किया जाए। उसने अपने पिता को अपना निर्णय सुनाया "पिताश्री, पांडवों की ख्याति बढ़ती जा रही है। लोग उनकी शूरता की प्रशंसा करते हुए थक नहीं रहे हैं। उन्हें उत्तम, आचरण-योग्य तथा धर्मात्मा कहकर अपने सिरों पर चढ़ा रहे हैं। उनकी पूजा कर रहे हैं। उनके सामने आपके पुत्र हम क्षुद्र लग रहे हैं। वे हमें नीचा दिखाकर हमारा अपमान कर रहे हैं। लगता है कि भविष्य में वे ही सम्राट बनेंगे और बने रहेंगे। हमारा नामोनिशान भी नहीं रहेगा। इसलिए उन्हें मारने के अलावा हमें और कोई रास्ता सूझ नहीं रहा है। निकट भविष्य में उनका अंत करने का हमने निर्णय किया है"।

धृतराष्ट्र पुत्रों के इस निर्णय से बहुत ही संतुष्ट हुआ। उसने भी अपनी सम्मति दी। दुर्योधन की योजना का सहर्ष समर्थन किया।

योजना बनी पाँडवों को वारणावतपुर (काशी) भेजने की और उन्हें लाख से बने घर

में ठहराने की, जिसको जला देने पर वहाँ पाँडवों का भस्म मात्र मिलेगा।

धृतराष्ट्र के आज्ञानुसार उसके मंत्री एक बार पांडवों के पास आये और वारणावतपुर की सुंदरता की प्रशंसा के पुल बांधने लगे। उस नगर में जाने और उसे देखने के लिए वे उन्हें प्रोत्साहन देने लगे।

धृतराष्ट्र ने स्वयं एक बार पाँडवों को बुलाया और कहा "पुत्रो, कहते हैं कि वारणावतपुर को देखने से जन्म चरितार्थ होता है। उसकी सुंदरता वर्णनातीत है। बहुत ही जल्दी वहाँ शिव का बड़ा उत्सव भी संपन्न होनेवाला है। वहाँ जाकर आप विश्राम भी कर सकते हैं और पुण्य भी कमा सकते हैं। अपनी माँ को लेकर आप लोग वहाँ अवश्य जाइये। वहाँ कुछ दिन बिताकर हस्तिनापुर लौटिये।"।

धर्मराज को लगा कि दाल में ज़रूर कुछ काला है। उसे लगा भी कि यह देश-बहिष्कार है। इस बहाने हमारा अहित करने पर ये तुले हुए हैं। इसलिए उसने धृतराष्ट्र की बातों पर कोई विशेष उत्साह नहीं दिखाया।

इतने में दुर्योधन ने पुरोचन नामक एक शिल्पी को एकांत में बुलाया और उससे कहा "हमारे पिताश्री पाँडवों को वारणावतपुर भेज रहे हैं। तुम उनसे पहले ही वहाँ पहुँच जाओ। वहाँ पहुँचकर लाख जैसी तीव्र गति से जलनेवाली सामग्रियों से एक सुँदर घर बनाओ। देखनेवालों के मुँह से घर की सुँदरता की वाहवाही हो, वे सन्नाटे में आकर तालियाँ बजाएँ और उसे देखते ही रह जाएँ। पाँडव उस घर में कुछ दिनों तक बिना किसी संदेह के निवास करेंगे। एक दिन जब वे आधी रात को मस्त नींद में होंगे, तब घर में आग लगा देना और लौटना।

वे उसमें जलकर राख हो जाएँ तो मैं निश्चिंत रह पाऊँगा। फिर मैं इस सुविशाल देश का राजा बनूँगा और तुम्हारे उपकार का उचित मूल्य भी चुकाऊँगा। ऐसा मूल्य दूँगा कि जिसका तुम अनुमान भी नहीं लगा सकते।"

पुरोचन ने अपनी सम्मति दी। वायु से भी वेग से दौड़नेवाले अश्वों का रथ तैयार करवाया गया और उसे वारणावतपुर भेजा गया। पुरोचन वहाँ पहुंचते ही अपने कार्य में मग्न हो गया।

गोपी का अनुमान

गोपी की मति भ्रष्ट हो गयी। उसके चाचा का बेटा समर उसे शहर ले गया और एक वैद्य के सुपुर्द किया। वैद्य ने कुछ महीनों भर उसकी चिकित्सा की। उसने उसे, उसके ठीक हो जाने का आश्वासन दिया और घर लौटने को कहा।

गोपी अपना घर लौट रहा था। गाँव की सरहद पर उसने देखा कि इमली के पेड़ के नीचे बैठा एक व्यक्ति उसी को आँख फाड़-फाड़ कर देख रहा है। उसे देखकर गोपी को लगा कि मैंने इस आदमी को पहले भी कहीं देखा था।

गोपी उसके पास आकर बोला "महाशय, मैंने पहले भी आपको कहीं देखा था। मुझे लगता है कि आपको मैंने पिछले साल नरहरपुर के नारायण के पुत्र के विवाह के अवसर पर देखा था। मेरा अनुमान सही है ना?"

नाराज़ी से देखते हुए उस व्यक्ति ने कहा "नहीं, हम वहाँ नहीं मिले।"

"हाँ, याद आया। वराहपुर के पशुओं की हाट में हमारी मुलाक़ात हुई। मैंने ठीक कहा ना?" गोपी ने पूछा।

और अधिक नाराज़ होते हुए उस व्यक्ति ने कहा "बिलकुल नहीं"।

"तो हम एक दूसरे से परिचित हुए, ठाकुर जयसिंग की पोती की शादी पर।" गोपी ने कहा।

वह व्यक्ति आपे से बाहर होकर बोला "बस करो बेवकूफ़ कहीं के। मैं तुम्हारे चाचा का बेटा समर हूँ। चलो, मेरे साथ।"

"अब भी तुम्हारी मति भ्रष्ट ही है" कहते हुए गोपी को फिर से शहर ले गया और उसे वैद्य को सौंपा।

– रमण

नीम का पेड़

एक स्त्री एक वैद्य के पास दौड़ी आयी। उसने वैद्य से बताया "मेरा पति दूर प्रांतों में जा रहा है। उसका जाना मुझे क़तई पसंद नहीं। मुझे कोई ऐसा उपाय बताइये, जिससे वह सुरक्षित लौटे"। तब वैद्य ने उस स्त्री को उपाय बताते हुए यों कहा "तुम अपने पति से बताओ कि जाते हुए वह इमली के पेड़ के नीचे विश्राम करे, और लौटते समय विश्राम करे नीम के पेड़ के नीचे।" पत्नी के कहे मुताबिक़ जाते हुए, इमली के पेड़ों के नीचे सोकर वह अपनी थकावट दूर करता हुआ आगे बढ़ता गया। किन्तु मार्ग के मध्य में वह बीमार पड़ गया और लौट पड़ा। लौटते हुए उसने नीम के वृक्षों के तले विश्राम लिया। पर लौटते-लौटते वह बिल्कुल ही चंगा हो गया। नीम के वृक्ष के औषधों के गुणों को बतानेवाली यह कहानी पुरानी है, परंतु सौ फ़ी सदी सच है। यह कहानी हमें बताती है कि इमली के पेड़ की छाया तथा वायु तबीयत को बिगाड़ती हैं और नीम के पेड़ की छाया व वायु तबीयत को सुधारती हैं। इनसे आरोग्य को लाभ ही लाभ पहुँचता है।

नीम में बहुत ही औषधों के गुण मौजूद हैं। मुख्यतया इसमें कीड़े-मकोड़ों को मारने की शक्ति है। साबुन और टूथ पेस्ट बनाने के काम में नीम के तेल का उपयोग होता है। अब भी गाँवों में ग्रामीण सुबह-सुबह नीम की दतून से दाँत साफ़ करते हैं। नीम के पेड़ की हवा स्वास्थ्य के लिए बहुत ही अच्छी है। इसीलिए चेचक का रोग जब फ़ैलता है, तब घर के सामने नीम के पेड़ों के पत्ते बाँधा करते हैं। विश्वास किया जाता है कि नववर्ष के आरंभ के दिन (चाँद्रमान) नीम के फूलों को निचोड़कर खाने से वर्ष भर स्वस्थ रह सकते हैं। नीम के पेड़ में पायी जानेवाली गोंद से भूख बढ़ती है। नीम की लकड़ी बड़ी ही मज़बूत होती है। चूंकि यह कड़वी होती है, इसलिए चींटियाँ, दीमक व कीड़े-मकोड़े इसे छूते तक नहीं। इसकी लकड़ी को अधिकतर जहाज़ बनाने के काम में लाते हैं।

नीम का पेड़ ऊँचा होता है। इसके चारों ओर टहनियाँ होती हैं। छोटी-छोटी गहरी पत्तियाँ नोकदार होती हैं। ऐसे तो साल भर यह विकसित रहता है, परंतु मार्च-अप्रैल में यह घने पत्तों से घिरा रहता है। छोटे-छोटे सफ़ेद फूलों से शहद की सुगंध आती है। साल में दो बार इसमें मंजरियाँ फूलती हैं। इसके छोटे फलों का छिलका निकालकर मुँह में डालें तो बहुत ही मीठे लगते हैं।

हिन्दी में इसे नीम, बंगाली में नीमगाच, कन्नड में बेवू, तमिल में वेंबु, मलयालम और तेलुगू में वेपा, मराठी में नीमबाय, और अंग्रेज़ी में मार्गोसा कहते हैं।

कालिदास

कौन ऐसा होगा, जो कालिदास और उनके पोषक विक्रमादित्य के बारे में नहीं जानता हो? यह भी जानी हुई बात है कि हम हर महीने जिन बेताल कथाओं को 'चन्दामामा' में पढ़ते हैं, उनसे विक्रमार्क का संबंध है।

प्राचीन भारतीय साहित्य में महाकवि कालिदास से रचित काव्यों और नाटकों का महोन्नत स्थान है। यह तो निर्विवाद सत्य है। किन्तु उनके जीवन- काल के बारे में पंडित एकमत नहीं हैं। उनके अभिप्राय भिन्न-भिन्न हैं। कुछ पंडितों का विचार है कि कालिदास ई.पू. आठवीं शताब्दी के हैं तो कुछ पंडितों का अभिप्राय है कि वे ई.पू. दूसरी शताब्दी के हैं। कुछ ऐसे भी हैं, जिनका कथन है कि वे ई.पू.चौथी शताब्दी के हैं।

हमारे देश के इतिहास में विक्रमादित्य के नाम से बहुत ही राजा थे। इनमें दो विक्रमादित्य सुप्रसिद्ध हैं। विक्रम शक का प्रारंभ करनेवाले राजा प्रथम विक्रमादित्य थे। वे ई.पू. पहली शताब्दी के थे। दूसरे राजा थे द्वितीय चंद्रगुप्त। उनका शासन-काल था चौथी और पाँचवीं शताब्दी का मध्यकाल। बहुत-से इतिहास-कारों का विश्वास है कि कालिदास इस विक्रमादित्य के ही आस्थान कवि थे। किन्तु इसके भी नाममात्र आधार हैं। विक्रमादित्य के आस्थान में कालिदास को भी मिलाकर 'नवरत्न' के नाम से सुप्रसिद्ध, माने-जाने नौ पंडित थे। वे थे कालिदास, धन्वन्तरी, क्षपणक, अमरसिंह, शंकु, बेतालभट्ट, घटकर्पर, वराहमिहिर,, वररुचि। इसके संपूर्ण आधार नहीं हैं कि ये 'नवरत्न' द्वितीय चंद्रगुप्त के ही दरबार में थे। इसलिए हो सकता है कि ये 'नवरत्न' इसके पूर्व के विक्रमादित्य के दरबार में हों।

जो भी हो, इसमें कोई भी संदेह नहीं कि कालिदास उज्ज्ञयनी नगरवासी थे। प्राचीन काल के सुप्रसिद्ध नगरों में उज्ज्ञयनी मुख्य नगरों में से एक था।

कालिदास से संबंधित एक विचित्र गाथा भी प्रचलित है।

युवक कालिदास बिल्कुल ही अनपढ़ थे। उन्हें एक अक्षर भी पढ़ना नहीं आता था। एकदम नादान थे। विद्यागर्व में चूर एक युवरानी ने कुछ पंडितों का घोर अपमान किया। उन्होंने युवरानी से प्रतिशोध लेने के लिए एक योजना बनायी। नादान और अनपढ़ कालिदास को उन्होंने महान पंडित के रूप में उपस्थित कर दिया और उनका विवाह राजकुमारी से रचाया। किन्तु शीघ्र ही राजकुमारी को ज्ञात हो गया कि उसके साथ धोखा हुआ है। अति क्रोधित होकर उसने पति को राजमहल से निकाल दिया। कालिदास काली माता के उपासक थे। वे दुखी होकर, काली माता की मूर्ति के सामने खड़े हो गये और वहाँ पड़े शूल को उठाकर अपना अंत कर देना चाहा। उस समय काली माता प्रत्यक्ष हुई और उन्हें महाकवि बनने का वरदान प्रदान किया। अक्षर से भी अनभिज्ञ कालिदास इस वरदान से, कालीमाता की कृपा से, महाकवि कालिदास बने, जो विश्वभर में प्रसिद्ध हुए।

कालिदास ने 'रघुवंश', 'कुमारसंभव' नामक दो काव्य रचे। 'विक्रमोर्वशीय', 'मालविकाग्निमित्रं', 'अभिज्ञान शाकुंतलं' नामक तीन नाटक, 'मेघदूत' तथा 'ऋतुसंहार' नामक दो और काव्यों की भी रचना की।

केवल संस्कृत साहित्य पर ही नहीं, बल्कि भारत की विविध भाषाओं के साहित्यों पर कालिदास का जो प्रभाव पड़ा, वह वर्णनातीत है।

क्या तुम जानते हो?

१. हमारे देश में तैयार अंतरिक्ष प्रक्षेपास्त्र का क्या नाम है? इसका प्रयोग कहाँ से हुआ?
२. साँप कितने प्रकार के हैं?
३. गुजरात का पोरबंदर किसके लिए प्रसिद्ध हुआ?
४. ब्रिटेन के प्रथम प्रधान मंत्री कौन थे?
५. हमारे देश में लंबा मंदिर-मंडप कहाँ है?
६. टेलिस्कोप का आविष्कार किसने किया? कब?
७. हमारे देश के वृक्ष-शास्त्र को, परिशोधन के उद्देश्य से आठ भागों में विभाजित किया है। वे आठों भाग क्या हैं?
८. 'मेर्डेका कप' किस क्रीड़ा से संबंधित है?
९. हमारे देश में कब पहली बार 'पंचवर्षीय योजना' का आरंभ हुआ?
१०. हमारे देश में प्रथम बना ३-डी चित्र क्या है? और कब बना?
११. भारत की स्वतंत्रता के लिए लड़नेवाली 'ऐरिष' वनिता का क्या नाम है?
१२. हमारे देश में 'ऐयरमेल' कब शुरु हुआ?
१३. 'फ्लैयिंग सिख' के नाम से प्रसिद्ध व्यक्ति कौन हैं?
१४. लोकसभा के प्रथम अध्यक्ष कौन हैं?
१५. 'ब्रह्म समाज' के संस्थापक कौन हैं?
१६. वर्तमान अग्निपर्वतों में से सबसे ऊँचा पर्वत कौन-सा है?
१७. 'ओशन टु स्कै' नामक हमारे देश में मशहूर, साहस से भरे पर्वतारोहण का नेतृत्व किसने संभाला?
१८. कौन-सा वह पौधा है, जो पत्तों में अपना आहार सुरक्षित रखता है?

उत्तर

१. रोहिणी, तिरुवनंतपुरम के समीप के तुम्बा से। १९६७, नवंबर, २०
२. दो हज़ार से अधिक
३. महात्मा गाँधी का जन्म-स्थल
४. सर राबर्ट वालपोल
५. रामेश्वर
६. नेदरलैंड के हान्स लिप्परशे, १६०८, अक्तूबर, १
७. दकन, मलबार, सिंधु मैदान, गंगा मैदान, असम, पूर्वी हिमालय, पश्चिमी हिमालय, अंडमान्स
८. फुटबाल
९. १९५१ में
१०. मैडियर कुट्टिचात्तान, (मलयालम) १९८४ में
११. अनिबिसेंट
१२. १९११ में
१३. खिलाड़ी मिल्कासिंग। १९६०, रोम ओलंम्पिक्स
१४. जी.वी. मावलंकर, १९५२ से १९६० तक
१५. राजा राममोहनराय
१६. अर्जेंटीनिया का ओटोफाला, ६४९० की ऊँचाई
१७. सर एडमंड हिल्लरी
१८. काबेज

निरुपयोगी मैत्री

प्रताप की उम्र थी बारह साल। घर के सब काम-काजों में वह अपने माँ-बाप की सहायता करता था। अड़ोस-पड़ोस के लोग भी जब कभी उसकी सहायता माँगते, तो वह करता था। उसकी अच्छाई के कारण सब लोग उसे चाहते थे। वह तो नरेंद्र नामक समवयस्क बालक को बहुत चाहता था। देखनेवालों को लगता था कि वे सच्चे दोस्त हैं।

नरेंद्र का घर, प्रताप के घर के बग़ल में ही था। वह धनवान का बेटा था। उसे तो कोई भी काम करना नहीं पड़ता था। फुरसत के समय वह ज़्यादातर प्रताप के ही पास रहता था। वह प्रताप के घर जाता रहता था, लेकिन कभी भी उसे अपने घर बुलाता नहीं था।

एक दिन शाम को गाँव के कुछ युवक गाँव के बाहर के मैदान में कबड्डी खेल रहे थे। जब वे खेलते-खेलते थक गये, तब एक जगह पर बैठकर गप लड़ा रहे थे। उस समय वहाँ मिठाई बेचने एक मिठाईवाला आया।

इस बार एक नये प्रकार की मिठाई बनाकर वह ले आया था। लड़के उसे खरीदकर बड़े चाव से खाने लगे। प्रताप ने भी खरीदा, लेकिन नरेंद्र चुप बैठा रहा। ''क्या तुम्हारे पास पैसे नहीं हैं''? प्रताप ने तरस खाते हुए पूछा।

''पता नहीं, पैसों की कब ज़रूरत आ पड़ेगी, इसलिए मैं हमेशा अपने पास पैसे रखता हूँ। लेकिन मेरी माँ ने मुझे सावधान किया है कि कभी भी बाहर खाने की चीज़े मत खरीदना और खाना। मैं अपनी माँ की बातें भूलकर भी नहीं टालता।'' नरेंद्र ने धीरे कहा।

''घर के लोगों को कैसे मालूम होगा कि तुमने मिठाइयाँ खरीदी हैं। मेरी बात सुनो। तुम भी खरीदो और मज़े से हमारे साथ मिलकर खाना''। प्रताप ने सलाह दी।

''मेरी माँ अच्छी तरह से जानती है कि मेरे पास पैसे कितने हैं? घर जाने के बाद वह

क्योंकि तुम्हारी माँ ने खाने से मना किया है'', दुख प्रकट करता हुआ प्रताप बोला।

''तुम खरीदोगे तो मैं ज़रूर खाऊँगा। क्योंकि मेरे पैसे कम नहीं होंगे। जितने थे, उतने ही होंगे। इससे घर में भी कुछ मालूम नहीं होगा। पैसे ना घटें तो मेरी माँ मुझसे कुछ नहीं पूछेगी। अगर नहीं पूछेगी तो झूठ बोलने की ज़रूरत भी नहीं पड़ेगी।'' नरेंद्र ने यह बताकर अपनी अक़्लमंदी जतायी।

प्रताप ने, नरेंद्र को मिठाई खरीदकर दी। उसे खाकर वह उसकी तारीफ़ करता हुआ बोला ''तुम्हारी वजह से ही मैं स्वादिष्ट मिठाई खा पाया। लेकिन यह बात तुम अपनी माँ से भी मत कहना। हो सकता है, वह मेरी माँ को बता दे''।

प्रताप ने 'हाँ' कहा। एक बार पड़ोस के लोगों ने बाहर जाते हुए प्रताप से कहा ''बेटा, घर में नरेंद्र अकेला है। हम सब दो घंटों में लौट आयेंगे। तब तक तुम उसके साथ रहना''।

आज तक प्रताप ने कभी भी नरेंद्र के घर के अंदर झाँककर भी नहीं देखा। इसलिए वह उसका घर देखने आतुर भी था।

नरेंद्र का घर बहुत ही सुँदर और विशाल था। उस घर में ऐसी बहुत-सी सुविधाएँ थीं, जिनके बारे में प्रताप बिल्कुल ही अनभिज्ञ था। नरेंद्र का अपना एक अलग कमरा था। उस कमरे में शीशे की एक अलमारी थी, तरह-तरह के गुडिये थे, खेलने की और बहुत-सी सामग्रियाँ थीं। पुस्तकों से भरी एक अलमारी भी थी।

गिनेगी। कम पड़े तो पूछेगी कि उन पैसों से मैने क्या खरीदा?'' परेशान नरेंद्र ने कहा।

''बता देना कि किसी भिखारी को दान में दिया है। नहीं तो कह देना कि कहीं गिर गये हैं। अब तो तुम छोटे बालक नहीं हो। क्या घरवाले तुम्हारी बातों का एतबार नहीं करते?'' चकित प्रताप ने पूछा।

नरेंद्र उसके प्रश्न का उत्तर दिये बिना थोड़ी देर सिर हिलाता रहा और फिर बोला ''एतबार तो करेंगे, लेकिन मेरी दादी कहती है कि झूठ बोलना पाप है। दादी की बातों को मैं बहुत मानता हूँ''।

''देखो, मेरे पास और पैसे हैं। चाहो तो तुम्हें खरीदकर दूँगा किन्तु तुम खाओगे नहीं,

"इतना सब कुछ मेरे घर में है। इन्हीं से मेरा समय बीतता है। लेकिन तुम्हारे साथ समय बिताते हुए मुझे बहुत खुशी होती है, मेरा समय आराम से कट जाता है" नरेंद्र ने कहा।

प्रताप उसकी बातों पर खुश हुआ और कहा "अलमारी के अंदर खेलने की जो सामग्री है, जो पुस्तकें हैं, उन्हें एक बार देखना चाहता हूँ", कहता हुआ वह आगे बढ़ा।

पर नरेंद्र ने उसे रोक लिया। उसे किसी भी वस्तु को छूने नहीं दिया। बड़ों ने उससे कहा था कि बाहर के लोग उन्हें छूएँगे तो वे ख़राब हो जाएँगे।

"तुम तो हमारे घर जब-जब आते हो तब-तब हमारे घर की चीज़ें तो छूते हो।" प्रताप ने आक्रोश भरे स्वर में पूछा।

"तुम्हारे बड़ों ने मना नहीं किया, इसलिए।" नरेंद्र ने कहा। फिर दोनों बहुत देर तक बैठे रहे और एक दूसरे को कहानियाँ सुनाते रहे। लेकिन प्रताप के मन में कोई बात बैठ गयी थी, जो उसे परेशान कर रही थी। उसकी समझ में नहीं आया कि नरेंद्र का यह कैसा रुख है और उसकी असली नीयत क्या है? जान-बूझकर वह अपनी वस्तुओं से उसे दूर रख रहा है या बहाने बना रहा है? माता-दादी की आड़ में कहीं वह नाटक तो नहीं कर रहा है? वह दूसरों से पैसे लेगा, पर अपने पैसे खर्च नहीं करेगा। दूसरों के घर में आकर उनकी वस्तुओं का उपयोग करेगा, पर अपनी वस्तुओं को छूने तक नहीं देगा। आख़िर यह सच्चा दोस्त है, या नहीं?

एक बार जब गाँव के लड़के गाँव के बाहर बैठकर आपस में गप-शप कर रहे थे, तब वहाँ एक बाँसुरीवाला बाँसुरियाँ बेचने आया। बाँसुरी बजाने पर मधुर ध्वनि निकल रही थी। एक-एक बाँसुरी का दाम था, दो रुपये। नरेंद्र ने भी एक बाँसुरी खरीदी। प्रताप के पास एक ही रुपया था। इसलिए उसने एक रुपया नरेंद्र से माँगा। "मेरे दादा ने कहा था कि किसी भी दोस्त को कर्ज़ मत देना। उन्होंने यह भी कहा कि कर्ज देने से दोस्ती बिगड़ जाती है" नरेंद्र ने फटाक् से कहा।

प्रताप बहुत नाराज हो गया। कम से कम तीन-चार बार उसने उसे मिठाइयाँ खरीदकर दीं। गिनती की जाए तो बीस रुपयों से कम नहीं

होगा। अब एक रुपये का कर्ज़ माँगता हूँ तो बहाना बना रहा है। यह भी कैसा मित्र है, जो सब कुछ मुझसे लेता है और स्वयं कुछ नहीं देता।

''तुमने कहा था कि कर्ज़ देने से दोस्ती बिगड़ जायेगी। अपनी बात अच्छी तरह से याद रखना। तुम्हारा, कर्ज़ ना देने के कारण हमारी दोस्ती बिगड़ जायेगी। अगर मैं यह बाँसुरी खरीद नहीं सका तो समझ लो, हमारी दोस्ती बिगड़ ही गयी।'' रोष भरे प्रताप ने कह दिया।

''ऐसा मत कहो। तुम्हारी दोस्ती के बिना मैं रह नहीं सकता'' कह तो दिया, लेकिन उसने एक रुपया उसे नहीं दिया।

इतने में रमेश नामक एक लड़के ने एक बाँसुरी खरीदी और प्रताप को दी। उसने कहा ''तुमने बहुत बार मेरी मदद की। ऐसी बहुत-सी बाँसुरियाँ खरीदकर दूँगा भी तो तुम्हारा कर्ज़ चुका नहीं पाऊँगा''।

प्रताप खुश होता हुआ बोला ''अपने कर्ज़ की बात आगे कभी मत करना। यह एक रुपया ले। बाक़ी एक रुपया कल दूँगा।'' ज़बरदस्ती उसने एक रुपया उसके हाथ में थमाया और कहा ''देखा, दोस्ती इसे कहते हैं, दोस्त हो तो ऐसा हो''।

नरेंद्र का चेहरा फीका पड़ गया। दूसरे ही क्षण प्रसन्न होता हुआ बोला ''आज से रमेश भी मेरा मित्र है। क्योंकि उसकी वजह से तुम बाँसुरी खरीद पाये। यह काम करके उसने हमारी दोस्ती पक्की कर दी।

जब से तुमने कहा है कि बाँसुरी खरीदकर नहीं दोगे तो हमारी दोस्ती ख़तम, तब से तुम्हें मालूम नहीं, मैं कितना परेशान था, दुखी था। रमेश की वजह से मेरी परेशानी दूर हो गयी''। नरेंद्र ने सफ़ाई पेश की।

उस दिन से प्रताप, नरेंद्र से दूर-दूर ही रहने लगा। नरेंद्र बहुत कोशिशें करता रहा, पर प्रताप ने उससे बातें करने से विमुखता दिखायी। नरेंद्र ने प्रताप के दादा से अपना दुखड़ा बताया। प्रताप के दादा ने नरेंद्र को उसके घर भेजने के बाद उससे कहा ''मैं तो समझ रहा था कि तुम ही नरेंद्र के निकट मित्र हो। तुम तो बड़े खुदगर्ज़ निकले''।

''खुदगर्ज़ मैं हूँ या वह'' प्रताप ने हैरान हो पूछा। ''नरेंद्र तुम्हारा मित्र है। ज़रूरत पड़ने पर

तुमने उसकी मदद की। अवश्य ही यह तुम्हारा सद्गुण है। प्रतिफल की आशा रखना स्वार्थ है। इस छोटी-सी उम्र में ही स्वार्थ का होना अच्छा नहीं है'' दादा ने समझाया।

प्रताप नाराज़ हो बोला ''आवश्यकता पड़ने पर मेरी सहायता उसे भी तो करनी चाहिये।''

''वह चाहेगा तो सहायता करेगा, नहीं चाहेगा तो नहीं करेगा। मित्रता धन की अदला-बदली से या वस्तुओं को खरीदकर लेने और देने मात्र से स्थिर नहीं होती। एक दूसरे के विचारों में आदान-प्रदान होना चाहिये और अपनी बुद्धि तथा हृदय को विकसित करना चाहिये। इन्हीं के लिए मानव को मैत्री निभानी चाहिये। लेन-देन तोव्यापार-लक्षण है।'' दादा ने पोते प्रताप को समझाया।

दादा की कही बातें प्रताप को सही लगीं, फिर भी उसका संदेह दूर नहीं हुआ। उसने पूछा ''तो क्या आप समझते हैं कि इसमें नरेंद्र की कोई ग़लती नहीं?''

''ग़लती उसकी नहीं, तुम्हारी है। क्योंकि तुमने जो भी किया, नरेंद्र की खुशी के लिये किया। तुमने उसे ऐसा काम करने को कहा, जो उसे पसंद नहीं। नापसंद काम करने के लिए उसपर ज़बरदस्ती करना अवश्य ही तुम्हारी त्रुटि है।'' प्रताप के दादा ने कहा।

''हाँ, हाँ, मानता हूँ, आपने ठीक ही कहा। लेकिन जो मित्रता ज़रूरत पड़ने पर उपयोग में नहीं आती, ऐसी मित्रता से क्या प्रयोजन?'' प्रताप ने अपना विचार व्यक्त किया।

''क्यों नहीं? वह अपने व्यवहार से तुम्हें सिखा रहा है कि प्रतिफल की आशा ना रखनेवाली मित्रता कैसी होती है? अगर तुमसे नरेंद्र कुछ सीख नहीं पाया, तो उसके लिए तुम्हारी मित्रता ही निरुपयोगी सिद्ध होगी। यही बात तुम्हारे लिए भी लागू होती है।'' दादा ने कहा।

दादा का संदेश प्रताप की समझ में आया। भविष्य में प्रतिफल की आशा लेकर उसने किसी से दोस्ती नहीं निभायी। नरेंद्र को भी मालूम हो गया कि प्रताप के दादा ने उसे क्या संदेश दिया। वह अपने किये पर लज्जित हुआ और उसने अपने को सुधारा। क्रमश : ज़रूरत पड़ने पर वह दोस्तों की सहायता करता रहा। प्रताप की मित्रता से उसे लाभ हुआ।

जायदाद का बँटवारा

कपिलेश्वर के समीप के एक गांव में एक भूस्वामी था। उस गाँव के इर्द-गिर्द जो नौ गाँव थे, वही भूस्वामी उनका मुखिया, व न्यायाधिकारी था। वह बहुत ही संपन्न था। उसके चार बेटे थे। उनमें से बड़ा कामों का पर्यवेक्षण करता रहता था। दूसरा पशुओं की देखभाल करता था। तीसरा खेती का काम संभालता था। चौथे को शिक्षा में, भगवान से संबंधित कार्यों में तथा दान-धर्मों में अधिकाधिक अभिरुचि थी।

उम्र होते-होते भूस्वामी की शक्ति क्षीण हो गयी और वह पलंग पर ही लेटे रहने लगा। उसने अपने बेटों को बुलाया और कहा "बेटो, आज तक हमने दूसरों के झगड़ों का निपटारा किया, लेकिन आज तक हम कभी भी किसी के सामने अपने झगड़ों के निपटारे के लिए नहीं गये, ऐसी कोई आवश्यकता भी नहीं पड़ी। लगता है, मैं बहुत ही जल्दी मरनेवाला हूँ। किसी भी क्षण मैं मौत की गोद में सो सकता हूँ। इसलिए मेरी चारपाई के चारों गोड़ों के पास तुम चारों खड़े हो जाओ। मेरे मर जाने के बाद जहाँ तुम खड़े हो, वहीं खोदो। लेकिन हाँ, जायदाद को लेकर आपस में झगड़ना मत।"

चारों बेटे चारपाई के चारों ओर चारों गोड़ों के पास खड़े हो गये। पिता ने पूछा "क्या मुझे कुछ और करना बाक़ी है?"

जब सबने कहा कि आपको और कुछ करना नहीं है तो नारायण नाम को दुहराता हुआ भूस्वामी निश्चिंत मृत्यु की गोद में चला गया।

पिता के दाह-संस्कार के बाद चारों भाइयों ने कुदाल अपने हाथों में लिये और पिता के कहे अनुसार गोड़ों के नीचे खोदने लगे।

बड़े ने जिस जगह को खोदा, वहाँ निकला भूसा। दूसरे ने जहाँ खोदा, वहाँ पाया गोबर, तीसरे ने खोदा तो वहाँ मिट्टी के अलावा कुछ नहीं निकला। जब चौथे ने गोड़े के नीचे की

पचीस वर्ष पूर्व 'चन्दामामा' में प्रकाशित कहानी

ज़मीन खोदी तो वहाँ मिले, सोना-चाँदी। यह देखकर बाक़ी तीनों आग बबूला हो गये।

तीनों ने कहा "देख, पिताजी चौथे को ही ज़्यादा चाहते थे। वह निकम्मा था, फिर भी उन्होंने उसी को सोना और चाँदी दिये। हमें दिया भूसा, गोबर और मिट्टी। कितना अन्याय किया हमारे साथ"।

"चारपाई का जो गोड़ा, तुम्हें अच्छा लगा, वहाँ तुम लोग खड़े हो गये। तुम तीनों के खड़े हो जाने के बाद ही शेष गोड़े के पास मैं जा खड़ा हुआ। इसमें भला मेरी क्या ग़लती है। यह तो अपने-अपने भाग्य की बात है। कोई क्या करे?" चौथे ने शांत स्वर में बताया।

गुस्से से तमतमाते हुए बाक़ी तीनों भाइयों ने कहा "नहीं, हम यह नहीं मानते। कपिलेश्वर के न्यायस्थान में जायेंगे और वहीं इसका निपटारा होगा। उसी फ़ैसले को हम मानेंगे"। उन्होंने अपने पिता की अंतिम इच्छा की परवाह नहीं की और घर के मामले को बाहरी व्यक्ति के सम्मुख ले आने की धृष्टता की। उनके पिता जो नहीं चाहता था, वही हुआ।

न्यायाधिकारी ने उनका कहा सब कुछ सुना और थोड़ी देर सोचने के बाद पूछा "पूरा विवरण देते हुए बताइये कि आपके पिता की कुल जायदाद है क्या?"

भूस्वामी के चारों बेटों ने जवाब दिया, 'हमारे पिताजी भूस्वामी थे। पशु, अनाज, व्यापार, सोना - चाँदी, सब कुछ उनके पास था। उन्हें किसी चीज़ की कमी नहीं थी।"

"तो आपके पिता ने बँटवारा ठीक ही किया है। अनाज का व्यापार बड़ा करता है। दूसरा पशुओं की देखभाल करता है, खेती तीसरे की है, सोना-चाँदी चौथे के हैं। उन्हें बाँटकर आराम से रहिये" न्यायाधिकारी ने अपना फ़ैसला सुनाया।

फ़ैसला तीनों भाइयों को सही लगा। उससे वे खुश भी हुए। उन्हें अब मालूम हो गया कि उनके पिता ने चौथे के प्रति कोई विशेष वात्सल्य नहीं दिखाया, तरफ़दारी नहीं की। उनके साथ अन्याय भी नहीं किया। चारों गाँव लौटे और मिल-जुलकर रहने लगे।

Statement about ownership of CHANDAMAMA (Hindi)
Rule 8 (Form VI), Newspapers (Central) Rules, 1956

1. Place of Publication	'CHANDAMAMA BUILDINGS' 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
2. Periodicity of Publication	MONTHLY Ist of each calender month
3. Printer's Name	B.V. REDDI
Nationality	INDIAN
Address	Prasad Process Private Limited 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
4. Publisher's Name	B.VISWANATHA REDDI
Nationality	INDIAN
Address	Chandamama Publications 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
5. Editor's Name	B.NAGI REDDI
Nationality	INDIAN
Address	'Chandamama Buildings' 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026
6. Name and Address of individuals who own the paper	CHANDAMAMA PUBLICATIONS PARTNERS: 1. Sri B. VENKATRAMA REDDY 2. Sri B.V. NARESH REDDY 3. Sri B.V. SANJAY REDDY 4. Sri B.V. SHARATH REDDY 5. Smt. B. PADMAVATHI 6. Sri B.N. RAJESH REDDY 7. Smt. B. VASUNDHARA 8. Kum. B.L. ARCHANA 9. Kum. B.L. ARADHANA 'Chandamama Buildings' 188, N.S.K. Salai Vadapalani, Madras-600 026

I, B Viswanatha Reddi, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

B. VISWANATHA REDDI
Signature of the Publisher

1st March 1995

PolioPlus

IMMUNIZATION AN ASSURANCE OF GOOD HEALTH TO CHILDREN

VACCINATIONS When and How Many

Age to Start Vaccination	Name of Vaccine	Name of Disease	How Many Times
Birth	BCG	Tuberculosis	Once
6 weeks	Polio	Polio	Three times with intervals of at least one month
6 weeks	DPT	Diphtheria Pertussis (Whooping Cough) Tetanus	Three times with intervals of at least one month
9 months	Measles	Measles	Once

Babies should receive all vaccinations by the time they are twelve months old.

Pregnant women should get themselves vaccinated against Tetanus (TT) twice—in an interval of at least one month—during the later stages of pregnancy.

HEALTHY CHILD—NATION'S HOPE & PRIDE

Design courtesy: World Health Organisation

फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता :: पुरस्कार १००)

पुरस्कृत परिचयोक्तियाँ, मई, १९९५ के अंक में प्रकाशित की जाएँगी।

Taji Prasad

Taji Prasad

★ उपर्युक्त फोटो की सही परिचयोक्तियाँ एक शब्द या छोटे वाक्य में हों। ★ १० मार्च, '९५ तक परिचयोक्तियाँ प्राप्त होनी चाहिए। ★ अत्युत्तम परिचयोक्ति को (दोनों परिचयोक्तियों को मिलाकर) रु. १००/- का पुरस्कार दिया जायेगा। ★ दोनों परिचयोक्तियाँ केवल कार्ड पर लिखकर इस पते पर भेजें।

चन्दामामा, चन्दामामा फोटो परिचयोक्ति प्रतियोगिता, मद्रास-२६.

जनवरी, १९९५, की प्रतियोगिता के परिणाम

पहला फोटो : **किसान व्यस्त**

दूसरा फोटो : **खिलाड़ी मस्त**

प्रेषक : **शिव भगत राम, हरिजन विद्यालय,**

सदर बज़ार, बैरकपुर - P.O, उत्तर चौबीस परगना - ७४३१०१.

चन्दामामा

भारत में वार्षिक चन्दा : रु ६०/-

चन्दा भेजने का पता :

डाल्टन एजन्सीज़, चन्दामामा बिल्डिंग्ज़, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६

Printed by B.V. REDDI at Prasad Process Private Ltd., 188 N.S.K. Salai, Madras 600 026 (India) and Published by B. VISHWANATHA REDDI on behalf of CHANDAMAMA PUBLICATIONS, Chandamama Buildings, Vadapalani, Madras 600 026 (India). Controlling Editor: NAGI REDDI.

अपने प्यारे चहेते के लिए जो हो दूर सुदूर
है न यहाँ अनोखा उपहार जो होगा प्यार भरपूर

चन्दामामा

प्यारी-प्यारी सी चंदामामा दीजिए उसे उसकी अपनी पसंद की भाषा में–
आसामी, बंगला, अंग्रेजी, गुजराती, हिन्दी, कन्नड
मलयालम, मराठी, उड़िया, संस्कृत, तमिल या तेलुगु
–और घर से अलग कहीं दूर रहे उसे लूटने दीजिए घर की मौज-मस्ती

चन्दे की दरें (वार्षिक)

आस्ट्रेलिया, जापान, मलेशिया और श्रीलंका के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. 117.00 वायु सेवा से रु. 264.00

फ्रान्स, सिंगापुर, यू.के., यू.एस.ए.,
पश्चिम जर्मनी और दूसरे देशों के लिए

समुद्री जहाज़ से रु. 123.00 वायु सेवा से रु. 264.00

अपने चन्दे की रकम डिमांड ड्रॉफ्ट या मनी ऑर्डर द्वारा
'चन्दामामा पब्लिकेशन्स' के नाम से निम्न पते पर भेजिए:

सर्क्युलेशन मैनेजर, चन्दामामा पब्लिकेशन्स, चन्दामामा बिल्डिंग्स, वडपलनी, मद्रास-६०० ०२६.